Photo by A. L. Syed

पुरस्कृत परिचयोक्ति : 'हम तो हैं धरती के लाल !'

प्रेषक : श्री विजय कुमार गुप्ता, नई देहली

चुरमुरा...
ताजा...
स्वादिष्ट...
बढ़िया बिस्कुट
ब्रिटेनिया

चन्दामामा

अक्तूबर १९५६

विषय - सूची

'ए' पिल्स

रात में बच्चों को असमय में पेशाब की ज़रूरत पड़ती है। 'ए' पिल्स के उपयोग करने से शारीरिक व मानसिक हानि नहीं होती।

१०० गोलियाँ—रु. ३) में।

प्रति दिन दो गोलियाँ सवेरे, दुपहर और रात को पानी के साथ देना चाहिए।

डेन टॉनिक

छोटे बच्चों के दाँत बिना कष्ट के निकल आते हैं। बच्चों को अच्छी नींद आ जाती है। भूख लगती है और शौच भी साफ होता है।

१५० गोलियाँ : रु. १-८-०.

प्रति दिन तीन गोलियाँ सवेरे, दुपहर और रात को पानी के साथ देना चाहिए।

होमियो लॅबरेटरीज़
१२८, न्यू चर्नी रोड, बम्बई-४

★

दि ग्रेट इंडिया ट्रेडिंग कं.

२७/३१ मेडोज़ स्ट्रीट, फ़ोर्ट, बम्बई-१.

★

ग्राम-PHOTO BOARD

सोल एजन्ट्स : एम्. एम्. खंभातवाला
रायपुर :: अहमदाबाद-१

शुभ समाचार !

चन्दामामा

समुदाय के

नवम्बर १९५६ के सभी अंक

दीपावली विशेषांक

के रूप में प्रकाशित होंगे, जिनमें :

मनोरंजक कहानियाँ, सुरुचिपूर्ण शीर्षक, कलात्मक चित्र और अन्य सामग्री विविध रंगों में पढ़ने को मिलेगी ! मल्टीकलर का मुख-चित्र इसका प्रमुख आकर्षण है।

इसकी पृष्ठ-संख्या : ८०　　　दाम : ८ आने

एक विशेष सूचना :

हज़ारों पाठकों और चन्दादारों के आग्रह पर हमने नवम्बर १९५६ (दीपावली विशेषांक) से 'चन्दामामा' में अधिक पृष्ठ देने का निश्चय किया है। इसकी कहानियों और चित्रों में एक स्पृहणीय वृद्धि होगी। इस वृद्धि के अनुसार 'चन्दामामा' के मूल्य में निम्न परिवर्तन होंगे :

एक प्रति : ८ आने　　　वार्षिक : ६ रुपये

पृष्ठ संख्या : ८०

एजेन्टों से प्रार्थना है कि वे अपने आर्डर हमें भेज दें। पाठक अपनी प्रति अपने एजेन्ट के यहाँ सुरक्षित करा लें, अथवा सीधे हमें चन्दा भेजकर ग्राहक बनें। अन्य जानकारी के लिए लिखें :

चन्दामामा पब्लिकेशन्स, मद्रास - २६.

चन्दामामा

संचालक : चक्रपाणी

हर धार्मिक कथा-साहित्य की अपनी विशेषता है। उनकी कहानियाँ सोद्देश्य होती हैं। जातक कथायें भी, बौद्ध साहित्य में इसी श्रेणी की हैं। "चन्दामामा" में दो-तीन वर्षों से, प्रति मास एक एक जातक कथा प्रकाशित की जा रही है। जातक कथायें शिक्षाप्रद हैं। वे निरी कहानियाँ ही नहीं, परन्तु पारम्परिक, सैद्धान्तिक नैतिकता की निरूपक भी हैं।

बौद्ध साहित्य में "बोधिसत्व" की कल्पना नई और निराली है। जातक कथाएँ, बोधिसत्व की कहानियाँ हैं। बौद्ध परम्परा के अनुसार, बोधिसत्व, एक ही समय, कई रूपों में अपने को प्रकट कर सकते हैं। उनको मातृगर्भ में, विकास की नाना अवस्थाओं में से नहीं गुज़रना होता, वे श्वेत हाथी के रूप में माता के गर्भ में प्रवेश करते हैं, और उसी रात को जन्म लेते हैं।

इस महीने सफ़ेद हाथी की—"गजराज" कहानी दी जा रही है। आशा है, पाठकों के लिये यह विशेषतः रोचक होगी।

अंक : २

अक्तूबर १९५६

वर्ष : ८

मुख - चित्र

पाण्डवों के आरण्यवास के बारह वर्ष पूरे होने को थे कि अर्जुन के पक्षपाती इन्द्र को एक बात सूझी। शीघ्र ही पाण्डव और कौरव में युद्ध होगा—उस युद्ध में कर्ण गौरवों की तरफ़ होगा। उसके पास कवच-कुण्डल हैं। जब तक वे उसके पास हैं, उसको कोई बाण से बींध नहीं सकता, इसलिये इन्द्र ने ब्राह्मण का वेष-धारण कर उन कवच-कुण्डल को कर्ण से माँगने की सोची।

सपने में सूर्य ने प्रत्यक्ष होकर कर्ण से कहा—"बेटा! इन्द्र ब्राह्मण का वेष धारण कर तुझ से कवच-कुण्डल माँगने आयेगा। तू उन्हें मत देना। अगर तूने दे दिया तो युद्ध में तेरी जरूर मौत होगी।"

"मैं अपने व्रत को कैसे तोड़ूँ! मैंने प्रतिज्ञा कर रखी है कि मैं ब्राह्मण को प्राण तक दे दूँगा।"—कर्ण ने कहा।

"तो कवच-कुण्डल देकर इन्द्र से कोई शक्ति माँगना।" सूर्य ने सलाह दी।

थोड़े दिनों बाद इन्द्र ब्राह्मण के रूप में कर्ण के पास गया। कर्ण ने कहा—"ब्राह्मणोत्तम! बताओ, क्या चाहते हो?" तुरन्त इन्द्र ने कहा—"तुम अपने कवच-कुण्डल उतार कर मुझे दे दो। मुझे और कुछ नहीं चाहिये।"

"स्वामी! मैं जानता हूँ कि आप वेश बदले हुए इन्द्र हैं। आप जैसों को तो मनुष्यों को वर देना चाहिये। क्या आप के लिए ठीक है कि आप मुझ से वह चीज़ माँगें, जिसके अभाव में मुझे हानि होगी! मैं कवच-कुण्डल तो दे दूँगा, पर उसके बदले मुझे भी कुछ दीजिये।" कर्ण ने कहा। "जरूर दूँगा। पर वह हमेशा तेरे पास नहीं रहेगी, तेरे किसी एक शत्रु को मार कर फिर मेरे पास आ जाएगी।"—इन्द्र ने कहा। "मेरा तो एक ही शत्रु है, और वह है अर्जुन!"—कर्ण ने कहा। फिर इन्द्र ने सोचकर बताया कि उस शक्ति को तुझे आत्म-रक्षा के लिए ही उपयोग करना होगा। नहीं तो वह तेरा नाश कर देगी।

कर्ण यह सब मान गया। उसने अपने कवच-कुण्डल उतारकर दे दिये, और इन्द्र से शक्ति ले ली।

गजराज

तब ब्रह्मदत्त काशी का राजा था। काशी के कुछ दूरी पर एक बढ़इयों का गाँव था। सैकड़ों बढ़ई उसमें रहा करते थे। वे छोटी छोटी नौकाओं में बैठकर जंगल जाया करते, और वहाँ पेड़ काटकर शहतीर बनाकर लाया करते। जब लकड़ी खतम हो जाती तो वे फिर जंगल जाकर काटकर ले आते। बहुत पहिले से उनका यही क्रम चल आ रहा था।

उस जंगल के एक कोने में एक हथिनी रहा करती थी। एक दिन उसके पैर में एक लकड़ी चुभ गई। उसका पैर सूज गया और दुखने लगा। बहुत कोशिश की; पर वह लकड़ी न निकल पाई। इतने में उसको बढ़इयों के पेड़ काटने का शब्द सुनाई दिया। वह भी लंगड़ाती लंगड़ाती उन लोगों के पास गई। हथिनी को देखते ही वे जान गये कि उसे कहीं दर्द हो रहा था। वे अपना काम छोड़कर, उसकी तरफ़ आ गये। हथिनी उनके सामने लेट गई। आखिर उसके सूजे पैर को देखकर उन्होंने सोचा कि ज़रूर उसको कुछ चुभ गया है। छेनी वगैरह से सावधानी से उन्होंने लकड़ी बाहर निकाल दी। घाव की मरहम पट्टी भी कर दी। हथिनी को आराम मिला।

जल्दी ही हथिनी का पैर ठीक हो गया। तब से हथिनी भी उनकी मदद करने लगी। वह काटे हुए पेड़ों को खींचकर ले आती, तनों को इधर उधर फेंकती। शहतीरों को ढकेलकर नावों के पास ले आती।

इस तरह हर साल हथिनी और बढ़इयों का लगाव बढ़ता गया। वहाँ पाँच सौ बढ़ई थे, और वे अपने भोजन का कुछ

'जातक कथा'

न कुछ भाग बचाकर, हथिनी को खिलाते। इसी से वह सन्तुष्ट थी।

कुछ दिनों बाद, उस हथिनी के बच्चा पैदा हुआ। वह ऐरावत जाति का था। उसका रंग भी सफ़ेद था। जब हथिनी बूढ़ी हो गई, तो वह अपने बच्चे को लाकर बढ़इयों को सौंप गई, और स्वयं जंगल में चली गई। यह सफ़ेद हाथी भी बढ़इयों की मदद करता, उनके दिये हुए भोजन को खाता, उनके बच्चों को अपनी पीठ पर सवारी कराता। नदी में नहाता—धोता।...यों वह बड़े मज़े में अपना समय काट रहा था। बढ़ई भी उसका बड़े प्रेम से पालन-पोषण किया करते।

यह जानकर कि जंगल में एक सफ़ेद हाथी है, उसको पकड़ने के लिए, नौकर-चाकर सहित ब्रह्मदत्त जंगल में आया। राजा को देखकर बढ़इयों ने सोचा कि वह लकड़ी के लिये आया है। इसलिये उन्होंने कहा—"महाराज! आपको कष्ट करके यहाँ आने की क्या ज़रूरत थी? अगर आपको लकड़ी चाहिये थी तो हम ही लाकर आपको राजमहल में दे देते।"

"मैं लकड़ी के लिये नहीं आया हूँ। मैं इस सफ़ेद हाथी के लिये आया हूँ।"—राजा ने कहा।

"तो ले जाइये...." बढ़इयों ने कहा।

पर हाथी वहाँ से न हिला। राजा के साथ आये हुए एक व्यक्ति ने कहा—"महराज! यह अक़लमन्द जानवर है। अगर आप उसे ले गये तो इन बढ़इयों का नुक़सान होगा। जब तक उनको आप हर्जाना नहीं देंगे तब तक वह यहाँ से नहीं हिलेगा।"

राजा ने हाथी के चार पैरों के पास, सूँड़ के पास, पूँछ के पास, एक एक लाख रुपया रखा, और बढ़इयों को उसको लेने

के लिये कहा। तब भी हाथी न हिला। जब बढ़इयों की माँ-बहिनों और बाल-बच्चों को कपड़े आदि, भेंट दिये गये, तब वह हाथी वहां से हिला।

हाथी को बाजे-गाजे बजाते हुए ले जाया गया। उसका नगर के कोने कोने में जुलूस निकाला गया। उसके लिए एक अलग घर बनाया गया। हाथियों में वह सब से बड़ा माना जाने लगा। केवल राजा ही उस पर सवारी किया करता।

उस हाथी के आने के बाद, काशी के क्षेत्रफल का बहुत विस्तार हुआ। उसके प्रभाव के कारण बड़े बड़े बलशाली भी काशी राजा के द्वारा पराजित किये गये।

कुछ दिनों बाद राजा के पत्नी को गर्भ हुआ। उसके गर्भ में बोधिसत्व ने प्रवेश किया। रानी के प्रसव का एक सप्ताह था कि राजा की मृत्यु हो गई। उसी समय कोशल देश के राजा ने अपनी सेनाओं के साथ काशी पर आक्रमण किया। ऐसी हालत में काशी राज्य के मन्त्रियों को कुछ न सूझा कि क्या किया जाय। उन्होंने आपस में बहुत देर तक सलाह-मशविरा कर कोशल देश के राजा के पास यह खबर

भेजी—"हमारी रानी एक सप्ताह में बच्चे को जन्म देनेवाली है। अगर वह लड़की हुई तो आप आकर काशी पर कब्जा कर लीजिये; अगर लड़का हुआ तो हम आप से युद्ध करेंगे।" कोशल राजा ने यह खबर पाकर एक सप्ताह की अवधि दी।

एक सप्ताह बाद रानी ने बोधिसत्व को जन्म दिया। काशी राज्य की सेनाएँ, कोशल देश की सेनाओं से युद्ध में भिड़ पड़ीं। पर कोशल की सेनाएँ ही अधिक ताकतवर मालूम होती थीं। तब मन्त्रियों ने महारानी के पास जाकर कहा—"महारानी!

जब तक हमारा सफेद हाथी युद्ध में नहीं जाता तब तक हमारी विजय न होगी। परन्तु महाराजा की मृत्यु के बाद से हाथी ने खाना-पीना सब छोड़ दिया है। बड़ा दुःखी है। अब क्या करें, कुछ समझ में नहीं आता।"

यह सुनते ही रानी अपने पलंग पर से उठी। लड़के को राजा की पोशाक पहिनाई, और उसको लेकर हाथी के पास गई। उसने लड़के को हाथी के पैरों के सामने रखकर, नमस्कार कर कहा—"गजराज! अपने मालिक के मर जाने पर तुम शोक न करो। यह लो, यह तुम्हारा मालिक है। इसके शत्रु युद्ध में मैदान मार रहे हैं। तुम जाकर उन्हें हराओ। नहीं तो अपने पैरों से इस लड़के को कुचल दो।"

तब तक हाथी शोकातुर था। पर यह सुनते ही वह अपनी सूँड़ से लड़के के शरीर को पुचकारने लगा। उसको सूँड़ से उठाकर अपने सिर पर रख लिया। फिर उसको माँ के हाथों में रखकर वह युद्ध क्षेत्र की ओर चला गया।

जब बिजली की तरह गरजते हुए हाथी को अपनी ओर लपकते देखा तो कोशल देश के सैनिकों का साहस जाता रहा। वे इधर उधर अन्धाधुन्ध भागने लगे। हाथी सीधा कोशल देश के राजा के पास गया। उसको सूँड़ में लेपटकर राजकुमार के पास ले गया। कोशल देश का राजा बच्चे के पाँव पड़ा। क्षमा माँगने लगा। काशी के मन्त्रियों का उसने कुछ न बिगाड़ा। इसलिए उसको क्षमा कर, सकुशल उसके देश में उसको पहुँचा दिया।

जब तक बोधिसत्व सात वर्ष का न हो गया, तब तक हाथी काशी की रक्षा करता रहा। बोधिसत्व ने भी सिंहासन पर चढ़ने पर उसका मुख्य हाथी के रूप में आदर किया।

काम-चोर

किसी ज़माने में एक गुरु के यहाँ कई शिष्य दूर दूर से विद्या पढ़ने के लिए आकर रहा करते थे। एक बार गुरु के घर में ईन्धन ख़तम हो गया। इसलिए शिष्य पासवाले जंगल में लकड़ियाँ चुनने गये।

उनमें से एक बड़ा आलसी था। वह जब तक बाधित न किया जाता, तब तक कोई काम न करता। अगर काम करना भी पड़ जाता तो कम से कम काम करने की कोशिश करता। क्योंकि शिष्य काफ़ी थे, इसलिए कोई यह जान नहीं पाता था कि उस आलसी ने कितना काम किया था। अलावा इसके वह शिष्य बड़ा अक़्लमन्द भी था। वह किसी को यह पता नहीं लगने देता था कि वह काम-चोर था।

जंगल में घुसकर, सूखी लकड़ियाँ ढूँढ़ने और इकट्ठा करने में शिष्य मगन हो गये। आलसी को यह काम व्यर्थ-सा लगा। इधर उधर घूम-फिर कर अपने को थकाना भी नहीं चाहता। इसलिए वह दूसरों से अलग चला गया। उसका ख़्याल था कि कहीं न कहीं तो कोई सूखा पेड़ दिखाई देगा ही। उसके थोड़ी दूर जाने पर एक ऐसा पेड़ दिखाई भी दिया। उस पेड़ पर एक भी पत्र न था। पेड़ की खाल भी काली थी। काम-चोर ने सोचा कि वह पेड़ सूखा ही था। अब कहीं जाने की ज़रूरत ही नहीं है।

"इस एक पेड़ को ले जाना काफ़ी है। कई दिन काम आयेगा।" यह सोच वह साया में सो गया। जब वह सोने को तैयार हो रहा था, उसे बाकी शिष्यों का बातें करना, हँसना सुनाई पड़ रहा था। पर जब वह सोकर उठा तो चारों ओर

श्रीमती रमा शुक्ल

निश्शब्दता थी। काफ़ी समय भी हो गया था।

काम-चोर घबरा गया। वह जान गया कि साथ के शिष्य लकड़ियों के गट्ठर उठाकर ले गये थे। उसने सामने के पेड़ से दो-चार टहनियाँ तोड़ लीं और उनका गट्ठर बाँध कर, सिर पर रख घर की ओर भागा। जब वह गुरु के घर पहुँचा तो बाकी शिष्य पहुँच चुके थे, और उन्होंने अपनी लकड़ियाँ भी एक जगह इकट्ठी कर दी थीं। काम-चोर ने भी उस लकड़ी के ढेर में अपनी भी दो-चार लकड़ियाँ फैलाकर रख दीं। उसे यह सोच कर सन्तोष भी हुआ कि अन्त में सब ठीक हो गया था। किसी को भी उसके बारे में कोई शिकायत नहीं रही।

उस दिन रात को गुरु ने शिष्यों से कहा—"अरे फ़लाना गाँव में भोग कर रहे हैं। हमें भी निमन्त्रण आया है। मुझे पहले वहाँ जाना है। परन्तु तुम सब सवेरे थोड़ा खाना खाकर चल देना। दोपहर तक भोग के लिये पहुँच जाओगे।" गुरु की ये बातें सुनकर शिष्य बड़े खुश हुए।

सवेरे—गुरु-पत्नी ने शिष्यों के लिए खाना बनाने के लिए पिछले दिन शाम को लाई हुई लकड़ियों में से लकड़ी लेकर चूल्हा जलाया। परन्तु वे सब गीली लकड़ियाँ थीं, जो काम-चोर लाया था। इसलिए चूल्हा जला नहीं। चावल तैयार होते होते सूर्योदय भी हो गया। शिष्य ठीक समय पर खाकर तर्पण के लिए न आ सके। इसीलिए तो कहा गया है कि एक की करतूत होती है और सब बिगड़ते हैं। एक काम-चोर की वजह से सब शिष्यों को निराश होना पड़ा।

[१५]

[शिवदत्त और मन्दरदेव ने उस द्वीप में एक विचित्र व्यक्ति को देखा। उसने बताया कि वह दामन द्वीप का रहनेवाला था और उसको समुद्रकेतु नाम के समुद्री डाकू ने बारह साल पहिले उस द्वीप में छोड़ दिया था। जब वे सब मिलकर भोजन कर रहे थे तो समुद्र के किनारे से अजीब आवाज़ें आने लगीं। बाद में............]

शिवदत्त और मन्दरदेव, तलवार निकाल कर पेड़-पौधों को काटते हुए पास वाले समुद्र की ओर चलने लगे। उनके सैनिकों में दो पीछे रह गये थे। वज्रमुष्टि, रेंगता रेंगता सबसे पहिले समुद्र के किनारे पहुँचकर पीछे आनेवालों की ओर देखकर चिल्लाया—"होशियार"

सब चुपचाप पेड़ों के बीच में से समुद्र की ओर देखने लगे। किनारे से क़रीब एक हज़ार गज़ की दूरी पर समुद्र में नौका-युद्ध चल रहा था। उस युद्ध में छः नौकाएँ भाग ले रही थीं। यूँ तो समुद्र ही तूफ़ानी हो रहा था फिर उसमें इन नौकाओं ने और भी उथल-पुथल कर रखी थी। हथियार लिये अनेक योद्धा एक नौका से दूसरी नौका में कूदकर चमचमाते तलवारों से आपस में लड़ रहे थे। शिवदत्त और मन्दरदेव को बड़ा आश्चर्य हुआ।

यकायक एक कुरूपी, काला-कलूटा.... मुख में छुरी रख, एक नौका के पाल पर,

रेंग-रेंगकर चढ़कर वहाँ से एक हाथ से तलवार चलाते हुए—"जय काली" चिल्लाया और पासवाली नौका में कूद गया।

फिर क्या था! लड़ाई और ज़ोर से होने लगी। दोनों तरफ़ के योद्धाओं के सिर कट-कटकर नीचे समुद्र में गिरने लगे। वह काला-कलूटा तलवार चलाता चलाता एक नौका से दूसरी नौका में उछल-फाँद कर रहा था। वह बड़ा ज़ालिम नज़र आता था।

"हुज़ूर! वह ही समुद्रकेतु है। क्रूर, दुष्ट समुद्री डाकू जिसने मुझे इस जंगल में अकेले छोड़ दिया था।"—वज्रमुष्टि ने शिवदत्त से दाँत पीसते हुए कहा।

शिवदत्त और मन्दरदेव एक दूसरे का मुँह ताकने लगे। यह पता लगते ही कि वह समुद्रकेतु है, शिवदत्त ताड़ गया कि वह युद्ध समुद्रकेतु के डाकुओं और समुद्र में सफ़र करनेवाले व्यापारियों के बीच हो रहा था। वह सोच ही रहा था कि उन व्यापारियों की जान बचाने के लिए क्या किया जाय, एक छोटी नाव, बड़ी नौकाओं से अलग होकर, किनारे की ओर आने लगी।

शिवदत्त और मन्दरदेव दोनों आश्चर्य चकित थे। शायद वे लोग, जो युद्ध में भाग ले रहे थे, इस छोटी किश्ती को किनारे की ओर आता नहीं देख रहे थे। वे पहिले की तरह चिल्ला चिल्लाकर एक दूसरे को तलवार से मार-काट रहे थे।

थोड़े समय बाद समुद्रकेतु ज़ोर से चिल्लाया—"दौड़। वे भागे जा रहे हैं। तैरकर उन्हें पकड़ो।"

तुरन्त समुद्रकेतु की टोली के कुछ डाकू किश्ती को पकड़ने के लिए, समुद्र में कूदकर तैरने लगे। उसके बाद ही कुछ और लोग पानी में कूदे और तैरने

वाले डाकुओं का पीछे से तलवारों से मुक़ाबला करने लगे।

अब दोनों तरफ़वाले समुद्र में तैरते तैरते या तो तलवार से हमला कर रहे थे, नहीं तो हाथापाई कर रहे थे।

"यह युद्ध तो बड़ा अजीब मालूम होता है। एक तरफ़ तैर भी रहे हैं और दूसरी तरफ़ शत्रुओं से लड़ भी रहे हैं। इन योद्धाओं का सचमुच बड़ा विचित्र साहस है। इस तरह का युद्ध मैंने कहीं नहीं देखा।"—मन्दरदेव ने कहा।

शिवदत्त ने भी सिर हिलाकर कहा—"हाँ! सचमुच बड़ा अजीब है!" उसकी नज़र एक बार नौकाओं की ओर जाती और दूसरी बार किनारे के पास पहुँचनेवाली छोटी किश्ती पर। इन दोनों के बीच, तैराकों का भयंकर युद्ध चल रहा था।

धीमे धीमे, वह छोटी किश्ती किनारे के नज़दीक आ गई। अभी किनारा पाँच-छः गज़ दूर ही था कि उसमें से दो स्त्रियाँ उतरकर जल्दी जल्दी किनारे पहुँच गयीं। तब समुद्रकेतु की भयंकर आवाज़ आसपास प्रतिध्वनित हुई। तुरन्त दो नौकाएँ किनारे की ओर तेज़ी से आने लगीं। डूबती हुई दो नौकाओं में से कई चिल्लाने लगे। 'हाय हाय' करने लगे। हृदय-विदारक दृश्य था।

"मन्दरदेव! अब हमें ज़रूर कुछ करना ही होगा।"—शिवदत्त ने कहा। "ये स्त्रियाँ कौन हैं, कहाँ जा रही हैं, इस बारे में, इस समय जानने की कोई ज़रूरत नहीं है। अगर हमने इन डाकुओं का मुक़ाबला न किया तो ये आसानी से उनके हाथ में पड़ जाएँगी। उनकी जान का खतरा है।"

मन्दरदेव ने पीछे मुड़कर देखा। उसको केवल वज्रमुष्टि और चार सैनिक दिखाई

दिये। "बाकी दो कहाँ हैं।"—एक सैनिक से मन्दरदेव ने पूछा।

"हुज़ूर! वे दोनों, भोजन-सामग्री के पास ही पहरा दे रहे हैं।"—सैनिक ने जवाब दिया।

"फ़ौरन उनको यहाँ बुलाकर लाओ।"–मन्दरदेव ने आज्ञा दी।

सैनिक उन्हें बुलाने जा रहा था कि शिवदत्त ने रोककर कहा—"मन्दरदेव! हम सब मिलकर सिर्फ़ नौ ही हैं। समुद्रकेतु के गुट में पचास-साठ से अधिक हैं। उनके साथ हम कैसे लड़ सकेंगे! अगर हमें उनका मुक़ाबला करना है तो एक तरीका मुझे सूझ रहा है"

"क्या है....!" मन्दरदेव शिवदत्त की ओर देखने लगा।

"समुद्रकेतु के लिए यह जानना कि हम इतने थोड़े आदमी हैं, हमारे लिए ख़तरनाक है। इसलिए हम पेड़ों की आड़ में से, ऐसे चिल्लाएँगे, जैसे कि हज़ारों चिल्ला रहे हों, और उन पर कूद पड़ेंगे। बाकी तीन भी, डाकुओं के पीछे से, हमारी तरह चिल्लाते हुए हमला करेंगे।"—शिवदत्त ने कहा।

मन्दरदेव मान गया। भोजन सामग्री की रक्षा करनेवाले सिपाहियों को, यह बात बताने के लिए एक सैनिक को भेजा, और उससे कहा कि वह भी चिल्लाते हुए उनके साथ, पीछे से डाकुओं पर हमला करे।

समुद्रकेतु की दो नौकाएँ किनारे की ओर आने लगीं। समुद्र में युद्ध ज़रा ठंडा पड़ गया था। दो नौकाएँ तो डूब गई थीं, बाकी दो नौकाओं को अपने वश में कर, समुद्रकेतु की टोली किनारे की ओर आ रही थी। जब उनको रास्ते में तैरने-वाले दिखाई दिये, उन में से जो उनकी

तरफ़ थे, उनको नौकाओं में उठा लिया, और शत्रुओं का नौका में बैठे बैठे ही काम तमाम करने लगे।

शिवदत्त ने उस भयंकर द्वीप की ओर एक बार देखकर कहा—"मन्दरदेव! ये डाकू जैसे तैसे सभी को मार रहे हैं। अब उन स्त्रियों की रक्षा का भार हमें लेना ही होगा।"—शिवदत्त ने कहा।

मन्दरदेव ने सोचते हुए अपना सिर हिलाया। "चलो अब हम चलें" कहते हुए उसने दो क़दम आगे बढ़ाये और साथ आते हुए वज्रमुष्टि को देखकर आश्चर्य से कहा—"अरे अरे! वज्रमुष्टि के पास तो कोई भी हथियार नहीं है। तुम कैसे लड़ोगे! और हमने अभी तक यह देखा ही न था।"

यह सुन वज्रमुष्टि हँसा। "हुज़ूर! अगर मुझे छुरी-तलवार की ज़रूरत हुई तो मैं खुद पा लूँगा। मौक़ा लगे तो समुद्रकेतु को अपने हाथों से गला घोटने की मर्ज़ी हो रही है।"

सब वहाँ से चले। क्योंकि वज्रमुष्टि उस इलाके से परिचित था, इसलिए वह सबसे आगे आगे चला। किनारे पर पहुँची हुई
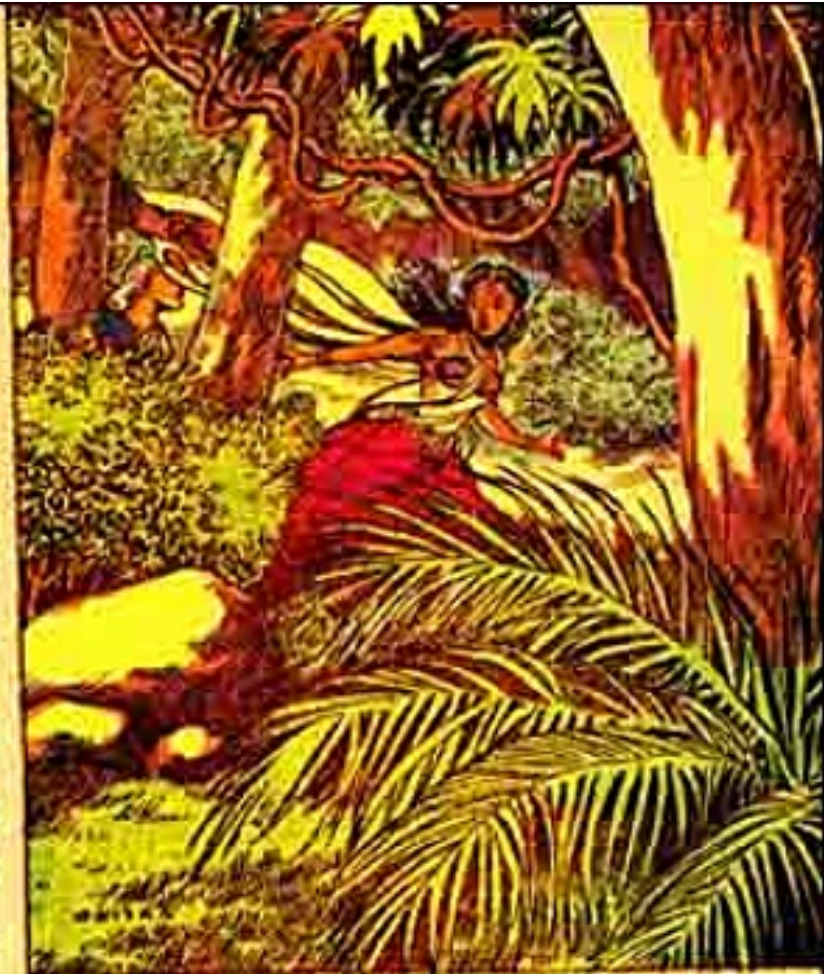
स्त्रियों ने एक बार समुद्र की ओर देखा और समुद्रकेतु के डाकुओं को पीछा करता देख, डर के कारण, वे पास के घने जंगल में भाग गयीं।

इस बीच में, समुद्रकेतु की दोनों नौकाएँ किनारे पर आ लगीं। वह तलवार निकालकर "जय काली" चिल्लाता पानी में कूदा और पीछे मुड़कर अपने साथियों को देखकर बोला—"उस स्वयंप्रभा को कोई हानि न पहुँचे। उसे जीता जी पकड़ लो और उस बुढ़िया को तलवार के घाट उतार देना। यह काम जल्दी करो। समझे!"

समुद्रकेतु घुटने भर पानी में चलकर किनारे पर पहुँचा। उसके पीछे बीस समुद्री डाकू भी किनारे पर आये। सब उस पेड़ों की झुरमुट की ओर चुपचाप चलने लगे, जहाँ वे स्त्रियाँ भाग गयी थीं।

"हमारे लिए पहिले वहाँ पहुँचना जरूरी है। जब वे पेड़ों के पास पहुँचे तो हम सब एक साथ चिल्लाकर उन पर कूदेंगे। विजय मिलेगी, नहीं तो स्वर्ग-प्राप्ति होगी। और कोई चारा नहीं है।"—शिवदत्त ने कहा। "सब मराल देवी की कृपा है।" कहता हुआ, मन्दरदेव तलवार ऊपर उठाकर नमस्कार करने लगा।

सब तलवार निकालकर, पेड़ों के पीछे छुपकर तैयार थे। भागी हुई स्त्रियों का कहीं पता न था। "तो मालूम पड़ता है कि शायद वे जंगल के अन्दर बहुत दूर चली गई हैं।"—मन्दरदेव ने कहा। शिवदत्त ने सिर हिलाकर कहा—"अगर हमने एक बार इन समुद्री डाकुओं को पीछे भगा दिया तो फिर मालूम कर लेंगे कि वे जंगल में किस तरफ़ गयी हैं। हमारे लिए यह कोई कठिन काम नहीं है।"

समुद्रकेतु अपने साथियों को लेकर पेड़ों के झुरमुट के पास चला आ रहा था। वज्रमुष्टि एक ऊँचे पेड़ पर चढ़ गया और एक झुकी हुई टहनी पर अजगर की तरह लेट गया। समुद्रकेतु और उसके साथियों के उस पेड़ के नीचे आते ही, "जय काली" चिल्लाता, उन पर वह बिजली की तरह कूद पड़ा। उसी समय, "जय मराली" कहते हुए शिवदत्त और उनके सैनिक, पेड़-झाड़ झंखाड़ों में से एक साथ बाहर निकलकर उन पर अचानक लपके।

समुद्रकेतु भौंचक्का था। वह घबरा गया। इस बीच में वज्रमुष्टि ने एक डाकू के हाथ से तलवार छीन ली। शेर की तरह गरजते हुए उसने दो-तीन शत्रुओं को वहीं ठंडा कर दिया।

समुद्रकेतु ज़रा सम्भला। अपने साथियों को जोश दिलाता हुआ, "जय काली" चिल्लाता शिवदत्त पर जा कूदा। तब तक उसके कुछ साथी पीठ दिखाकर मैदान छोड़ कर समुद्र की ओर भागे जा रहे थे। इतने में, पिछली तरफ़ से भयंकर आवाज़ करते हुए तीनों सैनिकों ने उन पर हमला किया।

समुद्रकेतु न घबराया। वह शिवदत्त से लड़ता लड़ता, पीछे हटता हटता, चिल्लाता जाता था—"भागो मत। ठहरो! दुश्मन दस से अधिक नहीं हैं।" यह सुन उसके भागते हुए साथियों का हौसला बढ़ा। साहस बटोरकर वे शिवदत्त के सैनिकों का फिर मुकाबला करने लगे।

दो-तीन मिनट युद्ध खूब ज़ोर से चला। वज्रमुष्टि को चार-पाँच डाकुओं ने घेर लिया। परन्तु उसने सब का वार बचाते हुए, अपनी तलवार बिजली की तरह घुमाते हुए दो-तीन को ज़ख्मी कर दिया था। जब कोई ज़ख्मी, मरता मरता नीचे गिरता, तो उसकी जगह आकर एक और ले लेता।

शिवदत्त जान गया कि इस तरह का युद्ध बहुत देर तक नहीं चल सकता था। वह एक तरफ़ अपने से छोटे और अधिक बलवान समुद्रकेतु से लड़ रहा था और दूसरी तरफ़, समुद्र के किनारे आते हुए शत्रुओं की दो नौकाओं की ओर देख रहा था। अगर उन दो नौकाओं में से और डाकू आ गये तो वे उस को और उसके सैनिकों को भी घेर सकते थे। उसने सोचा कि उस हालत में, उसका और उसके सैनिकों का पीछे हटना ही अच्छा था। उसने अनुमान लगाया कि जिन स्त्रियों की वे रक्षा करने निकले थे, वे तब तक बहुत दूर चली गई होंगी।

शिवदत्त ने "जय मराली" कहकर समुद्रकेतु को एक लात मारी। वह धूल चाटता चाटता उठने को ही था कि शिवदत्त अपने सैनिकों को ज़ोर से पुकार कर, पेड़ों की झुरमुट की ओर भागने लगा। उसको भागते देख, उसके सैनिक भी उसके पीछे भागने लगे। चुटकी भर में, शिवदत्त और उसके सैनिक पेड़ों में भाग गये।

(अभी और है)

विचित्र चाह

विक्रमार्क यथा पूर्व पेड़ के पास गया। पेड़ पर से शव को उतार कर कन्धे पर डाल वह श्मशान की ओर चल पड़ा। तब बेताल ने कहा—"राजा! सुनो, तुम्हें एक छोटी कहानी सुनाता हूँ।" उसने यह कहानी सुनाई :

किसी समय, कोशल देश में, एक जंगली जाति का परिवार रहा करता था। उस परिवार की स्त्री के, एक भाई के सिवाय मायके में और कोई न था। उसके माँ-बाप मर चुके थे। इसलिये उसके पति ने अपने साले को भी अपने पास रख लिया था। वह, उसका लड़का और साला जंगल काटकर, उसमें खेती किया करते थे। क्योंकि उन्होंने स्वयं मेहनत करके वह खेत तैयार किया था, इसलिये उस पर

बेताल कथाएँ

हल जोतते हुए जंगली, उसका साला और उसका लड़का दिखाई दिये।

"ये ही चोर हैं! चोरी करके यहाँ भाग आये हैं और ऐसे हल चला रहे हैं, जैसे कुछ मालूम ही न हो।"....चोरों को ढूँढ़ते हुए यात्री आपस में सोचने लगे। फिर वे उन जंगलियों को जबरदस्ती पकड़ करके राजा के पास ले गये।

"पहिले इनको क़ैद में डाल दो।" राजा ने हुक्म दिया। जंगली, उसके साले और लड़के को जेल में डाल दिया गया।

बाद में उनकी सुनवाई हुई। उनको निर्दोष साबित करने के लिए कोई गवाही न थी। जो लोग लूटे गये थे, उन्होंने कहा कि जिन्होंने उन्हें लूटा था, वे भी तीन थे, और तीनों जंगली थे। पर चूँकि उनके पास से चोरी का माल न बरामद हुआ था, इसलिये न्यायाधिकारी ने उनको फाँसी की सज़ा न देकर, काले पानी की सज़ा दे दी। वे बिचारे जंगल में खेती किया करते थे, इसलिये वहाँ कोई उनकी जान-पहिचान का भी न था।

यह बात जंगली की पत्नी तक भी पहुँची। वह तुरत राजधानी की ओर चल

न कर था, न टैक्स ही। जो कुछ फ़सल होती, वे आराम से खाते। वह परिवार इस तरह अपना समय बिता रहा था।

एक दिन जब कुछ यात्री जंगल में से जा रहे थे तो चोरों ने उनको लूट लिया। जब यात्री चिल्लाये तो कुछ और यात्री उनकी मदद के लिए भागे भागे आये। यह देख चोर जंगल में कहीं नौ दो ग्यारह हो गये। उनको ढूँढ़ते ढूँढ़ते कुछ यात्री वहाँ भी पहुँचे, जहाँ जंगली परिवार खेती कर रहा था। वहाँ उनको

पड़ी। राज-महल के पास जाकर वह रोने लगी—"बाबू! बचाइये। मेरी रक्षा कीजिये।"

राजा ने अपने सिपाहियों को यह जानने के लिए भेजा कि वह स्त्री कौन है और क्यों इस तरह रो रही है। उन्होने आकर जंगली स्त्री से पूछा—"क्यों गला फाड़कर चिल्ला रही है!"

"हुज़ूर....राजा ने मेरे बेक़सूर लोगों को क़ैद में डाल दिया है। मैं अकेली औरत रह गई हूँ....मेरी क्या हालत होगी!"—स्त्री ने उनसे पूछा।

सिपाहियों ने जाकर उसका जवाब राजा को बताया। राजा ने तब कहा—"उस औरत को थोड़ा-बहुत पैसा देकर भेज दो।"

सिपाहियों ने कुछ पैसा ले जाकर जंगली स्त्री को देना चाहा। पर उसने उसे लेने से इनकार कर दिया। जब सिपाहियों ने जाकर राजा को इसकी सूचना दी तो राजा ने उस स्त्री को बुलवाया। जंगली स्त्री, नमस्कार करके राजा के सामने खड़ी हो गई।

"सुना है तुम्हें जब पैसे दिये गये तो तुमने लेने से मना कर दिया। क्या चाहिये तुम्हें!"—राजा ने पूछा।

"महाराज! आपने एक साथ, मेरे पति, मेरे लड़के, और मेरे भाई को क़ैद में डालकर मुझे अकेला छोड़ दिया है। घर में कोई मर्द नहीं है।"—जंगली स्त्री ने कहा।

राजा उदार-दिल का था। उसने कहा—"तीनों को रिहा कर देना सम्भव नहीं है। उनमें से किसी एक को चुन लो, इसी समय छोड़ दूँगा।"

"ऐसी बात है तो मेरे भाई को छोड़ दीजिये।"—उस स्त्री ने कहा। यह सुन राजा सन्तुष्ट हुआ और उसने जंगली,

उसके लड़के, और साले तीनों को क़ैद से छुड़वा दिया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर राजा से पूछा—"राजा! मुझे एक सन्देह है। जंगली स्त्री ने भाई को छोड़ने के लिए क्यों कहा? क्या उसको अपने पति और लड़के पर प्रेम न था? या वह उनमें से किसी पर पक्षपात न करना चाहती थी। ख़ैर, राजा ने तो कहा था कि वह एक को छोड़ देगा, फिर उसने तीनों को क्यों छोड़ दिया? क्या इसलिये कि उसने बहुत देने के लिए वादा किया था, पर उसने थोड़ा ही माँगा था? इन प्रश्नों का उत्तर तुमने जान बूझकर न दिया तो तुम्हारा सिर फूट जायेगा।"

"जंगली स्त्री के भाई को छोड़ने के लिए कहने के जो कारण तुमने बताये हैं, वे नहीं हैं। जंगलियों में यह रस्म है कि अगर एक पति मर जाय तो वे दूसरी शादी कर सकते हैं। इसलिये अगर उसका वह पति चला जाता तो वह किसी और से शादी कर सकती थी। उसी तरह अगर वह लड़का चला जाता तो एक और लड़का पैदा हो सकता था। पर वह भाई चला जाता तो वह दूसरा भाई न पाती। इसलिये ही उसने भाई को छोड़ने के लिए कहा था। यह समझ कर राजा सन्तुष्ट हुआ। क्योंकि दानी को यह गँवारा नहीं होता कि बड़ी इच्छा को पूरी कर, छोटी इच्छा पूरी न करे, इसलिये राजा ने उसके भाई के साथ, उसके पति और लड़के को भी छुड़वा दिया।" विक्रमार्क ने जवाब दिया।

इस तरह राजा का मौन-भंग होते ही बेताल शव के साथ पेड़ पर जा बैठा।

[कल्पित]

बड़ों की चाल-बाज़ी

किसी ज़माने में रोम में एक रईस धर्मात्मा रहा करता था। उसका दिल अनाथों को देखकर पसीज उठता था। उन लोगों की वह हर तरह से मदद किया करता और अपने पास रखकर उनका पालन-पोषण भी किया करता।

उसी नगर में एक भिखारी रहा करता था। वह तरह तरह के वेष बना कर, लोगों की उदारता पर पेट भरा करता था। उसे मालूम हुआ कि फलाना धर्मात्मा बड़ा दानी भी था। भिखारी ने उसके पास से अच्छी-ख़ासी भीख वसूल करने की सोची। उसने अपने पैर को, जाने किन-किन चीज़ों का लेप करके, सुजा लिया, उस में एक फोड़ा भी तैयार कर लिया। क्योंकि वह इस तरह की विद्याओं में पारंगत था, इसलिये आसानी से दूसरे उसको जान न सकते थे। पैर पकड़कर, कराहता-चिल्लाता वह एक दिन सवेरे धर्मात्मा के घर के बाहर, भीख माँगने के लिए, धरना देकर बैठ गया। उस घर में आने-जाने वाले उस पर दया करके, दो-चार पैसे उसको दे जाते। परन्तु वह तो धर्मात्मा की भीख की फ़िराक़ में था। इसलिये वह, वह जगह छोड़कर कहीं और न गया।

थोड़ी देर बाद, धर्मात्मा स्वयं बाहर आया। उसको देखते ही भिखारी ने कहा —"बाबू, दया करो! मरा जा रहा हूँ!" वह ज़ोर से चिल्लाकर रोने लगा।

उसका पैर देखते ही धर्मात्मा का दिल पिघल गया। उसने अपने सिपाहियों को बुलाकर कहा—"इस बिचारे को कहीं ले जाकर लिटाओ। मेरे बिस्तर पर ही लिटाओ। मैं अच्छे वैद्यों को इस बीच

कुमारी सुषमा

में बुलाता हूँ। इसे जो कुछ चाहिये, दो। किसी चीज़ की कमी न हो।" यह कह धर्मात्मा चला गया। धर्मात्मा के नौकर-चाकरों ने उसको ले जाकर, धर्मात्मा के मोटे गद्दोंवाले पलंग पर लिटा दिया। थोड़ी देर बाद दो वैद्य, भिखारी की दवा-दारू करने के लिये वहाँ आये। वे दोनों रोम नगर में मशहूर वैद्य थे।

भिखारी को ऐसा लगा जैसे वह फल तोड़ने गया हो और पेड़ ही उस पर गिर पड़ा हो। उसने सोचा था कि धर्मात्मा दान देकर उसे भेज देंगे, पर उन्होंने इन वैद्यों को भेज दिया। उनमें से एक वैद्य ने भिखारी का पैर देखते ही कहा "अरे! फोड़ा बहुत पक गया है! पैर काटना ही होगा।" भिखारी का दिल थम-सा गया।

दूसरे वैद्य ने भिखारी का पैर ग़ौर से देखा—"यह झूट-मूट की सूजन है। भिखारी कई चीज़ों का लेप करके, इस तरह की बीमारियाँ पैदा कर सकते हैं। थोड़ी देर बाद यह सूजन गायब हो जायेगी।"

पहिले वैद्य भी पैर को अच्छी तरह देखने-भालने के बाद जान गया कि बीमारी सच्ची न थी। दोनों वैद्य यह देख कर झुंझला

उठे। "अगर दवा-दारू करते तो रईस खूब रुपया-पैसा देते। चोर-भिखारी कहीं का! इसने हमें अच्छी गुलाट दी। इसकी पोल उन के सामने खोलेंगे।"—एक वैद्य ने कहा। "उससे अच्छा होगा कि बीमारी सची जानकर इसका पैर काट दिया जाय! तब इसे अक्ल आयेगी।"—दूसरे वैद्य ने कहा।

भिखारी को मौत का डर लगने लगा। वह बिस्तरे पर बैठकर गिड़गिड़ाने लगा—"अक्ल मारी गई थी....दो-चार पैसे की आस से मैंने यह धोखा दिया था। मुझे माफ़ कीजिये! मेरा पैर न काटिये! उससे आपको क्या फ़ायदा!"

वैद्य ने आपस में इशारा किया। "अब भी क्या जाता है! हम यह कहेंगे कि हमने उसका पैर ठीक कर दिया है, और अपने पैसे वसूल कर लेंगे।" उन दोनों ने निश्चय किया। उन्होंने भिखारी से कहा—"अगर तूने ज़बान खोली, तो खबरदार! जब तक हम नहीं कहे, तब तक तू धर्मात्मा से यही कहता रह कि तेरा पैर ठीक नहीं हुआ है। अगर न कहेगा तो समझ ले कि वह पैर तेरा नहीं है। समझे!" उन्होंने उसे डराया-धमकाया।

भिखारी यद्यपि पेट भरने के लिए दूसरों को धोखा दिया करता था, तो भी वह इन मशहूर वैद्यों का धोखा देखकर, चकित था। परन्तु चूँकि उनमें जितनी हिम्मत थी, उसमें न थी; इसलिये वह वैद्यों की बात पर चलने लगा।

वैद्यों ने धर्मात्मा से कहा—"यह बिचारा बड़ी नाजुक हालत में है। भगवान की दया से वह आपकी नज़रों में आया, और आपने हमें बुलाया। उसका पैर ठीक करने के लिए हम भरसक कोशिश करेंगे। बाद में भगवान की इच्छा।"

वे रोज़ आते, पट्टियां खोलकर बाँध जाते। कई सप्ताह बीत गये। महीने बीत गये; पर न पैर ही ठीक हुआ, न चिकित्सा ही बन्द हुई। भिखारी के दिन भी मौज में कट रहे थे। परन्तु वह सोचने लगा कि वे दिन ही भले थे, जब वह स्वच्छन्द, गली गली में भीख माँगा करता था। उसने वैद्यों से विनती की—"आप मेरा पैर जल्दी ठीक कीजिये, आपका भला होगा।" तीन महीने बाद भिखारी से तंग आकर, वैद्यों ने जाकर धर्मात्मा से कहा कि चिकित्सा पूरी हो गई है। धर्मात्मा ने सन्तुष्ट होकर, वैद्यों को बहुत सा ईनाम और रुपया-पैसा दिया।

तब धर्मात्मा ने भिखारी से पूछा—"अब तो तुम्हारा पैर ठीक हो गया है.... क्या काम करना चाहते हो! कैसे रोज़ी करोगे!"

"बाबू! अक्ल आ गई है, फिर कभी भीख न माँगूंगा। उसके सिवाय और सब काम कर लूँगा।"—भिखारी ने कहा।

धर्मात्मा यह न जान सका कि वह वैसा क्यों कर रहा था। तो भी उसने उसको अपने पास ही नौकर रख लिया।

गरीब दूल्हा

किसी देश का एक छोटा राजा था। वह ख़ास समृद्ध न था। उसके एक सुन्दर लड़की थी। उसका नाम गुणमणि था। राजा की स्थिति ऐसी न थी कि स्वयं उसके लिये उपयुक्त वर खोज पाता, इसलिये उसने उसके लिए स्वयंवर रचने का निश्चय किया। स्वयंवर की घोषणा पर, उस कन्या से विवाह करने के इच्छुक, अपने अपने ओहदे के अनुसार, उसे उपहार लाकर देंगे। उनमें से, जिसको चाहे, कन्या चुन सकती है।

गुणमणि से विवाह करने के लिये आनेवालों में भद्र नाम का व्यक्ति सबसे अधिक ज़ोर-शोर से आया। उसके पिता का नाम दुर्जय था। वह बहुत ही भयंकर और क्रूर था। अपनी धूर्तता के कारण उसने कई राजाओं की नींद ख़राब कर रखी थी। उससे तंग आकर, एक बार पाँच-दस राजाओं ने मिलकर उस पर हमला करने की सोची। जब सलाह-मशविरे के बाद वे वापिस घर जा रहे थे, तो दुर्जय ने उन्हें यकायक रास्ते में घेर लिया, उनके पास से काफ़ी रुपया वसूल कर उन्हें छोड़ दिया।

भद्र के राजमहल की ड्योढ़ी में पहुँचते ही वीर नाम का एक व्यक्ति भी स्वयंवर के लिए वहाँ आया। वह एक बूढ़े कमज़ोर घोड़े पर सवार था। उसने पुराना जोड़ोंवाला, टूटा-फूटा कवच पहन रखा था। बहुत गरीब जान पड़ता था। उन राजाओं में, जो दुर्जय के हाथ में पड़कर अपना सारा धन खो चुके थे, वीर का पिता भी था।

भद्र ने नीची निगाह से उसको और उसके मरियल घोड़े को देखा।

श्री मनोज कुमार गुप्त

भद्र सितारों में चान्द की तरह चमक रहा था। सब प्रतियोगिताओं में उसी का ही पहिला हाथ था। पर वीर भी कोई कम न था। द्वन्द्व युद्ध में, उसने भद्र से अधिक व्यक्तियों को हराया था। परन्तु जब भद्र और वीर का मुक़ाबला हुआ, तो वीर हार गया। इसमें कोई आश्चर्य न था। भद्र के पास काफ़ी घोड़े थे। एक एक से लड़ने के लिए वह एक एक घोड़े पर चढ़ता था। वीर का घोड़ा, कई युद्धों के बाद थका गया था। वीर की हार का यही कारण था।

फिर अपने घोड़े को ऐंड मारकर ब्यांदी से वह सरपट आगे बढ़ गया। वीर ने उसको आगे बढ़ने दिया। फिर उसने कहा—"जब राजा आते हैं तो नौकर उनके आगे आगे चलते ही हैं।" भद्र यह सुन गरम हो गया। उसने मौका मिलने पर उससे बदला लेने की ठानी।

स्वयंवर के कार्यक्रम में, पहिले पहिले बल-पराक्रम का प्रदर्शन था। एक मैदान में इस प्रदर्शन के लिए प्रबन्ध किया गया था। प्रदर्शन देखने के लिए राज कुटुम्ब के साथ गुणमणि भी उपस्थित थी। राजकुमारों में,

सूर्यास्त के बाद सब अतिथि दरबार भवन में एकत्रित हुए। एक एक करके, सब ने अपने अपने लाये हुए उपहार, गुणमणि के सामने रखे। कई राजकुमार बहुमूल्य उपहार लाये थे। परन्तु भद्र के उपहारों के सामने उनकी कोई गिनती न थी। सब से अन्त में वीर आया। उसने अपनी तल्वार निकालकर गुणमणि के सामने रखते हुए कहा—"मैं गरीब हूँ! यही एक मेरे पास बहुमूल्य वस्तु है।"

"इसमें भी क्या रखा है? इसी की वजह से तो थोड़ी देर पहिले तुम हार गये थे।"—भद्र ने ताना मारा।

"अगर हम दोनों में—समान रूपसे युद्ध होता तो तब इस तलवार की महिमा देखते।"—वीर ने कहा।

अगले दिन के कार्यक्रम में जंगल में शिकार खेलना था। अतिथि अपने अपने घोड़ों पर सवार होकर शिकार के लिए निकले। जाने को तो वीर भी जंगल गया; पर शिकार खेलकर वह अपने घोड़े को थकाना नहीं चाहता था। भद्र आदि, जो सबसे आगे घोड़ों पर निकल गये थे, उनके साथ गुणमणि भी घोड़े पर सवार होकर निकली। परन्तु थोड़ी दूर जाने के बाद, उसको शिकार में दिलचस्पी कम होगई और वह वापिस लौटने लगी। तब उसको वीर आता दिखाई दिया।

"क्या आपको शिकार का शौक नहीं है?"—गुणमणि ने वीर से पूछा।

"है तो, पर यह बूढ़ा घोड़ा अर्से से हमारे वंश की सेवा कर रहा है। मैं उसे थकाना नहीं चाहता।"—वीर ने कहा था।

"लगता है....अच्छा घोड़ा न होने के कारण ही आप सबसे पीछे जा रहे हैं। आप मेरा घोड़ा ले लीजिये और अपना मुझे दे दीजिये।"—गुणमणि ने कहा।

"यह घोड़ा मुझे प्यारा है। यह मैं किसी को न दूँगा।"—वीर ने कहा।

"कल आपने तलवार देते हुए कहा था कि वह ही आपके पास सबसे अधिक मूल्यवान वस्तु थी, इसका मतलब है कि वह बात झूठी थी।" कहते कहते गुणमणि ने अपने घोड़े को ऐंड़ लगाई; बिना पीछे देखे, सरपट चली गई।

उसके बाद स्वयंवर का कार्यक्रम पूरा हो गया। गुणमणि को एक महीने बाद, अपना निर्णय घोषित करना था। अतिथि जाने लगे। वीर के सिवाय गुणमणि ने सब

को विदा दी। वीर की तरफ़ उसने देखा तक नहीं। यह देख उसे बड़ा अफ़सोस हुआ। जब वह राजधानी से कुछ दूर गया तो उसको एक छोटा गड़रिया दिखाई दिया।

वीर ने उस गड़रिये को बुलाकर कहा—"जो तू अब देखने जा रहा है, उसके बारे में अपनी राजकुमारी के पास जाकर कहना" कहते हुए उसने तलवार निकाल कर घोड़े को मार कर कहा—"मैं गुणमणि के लिए तेरी बलि दे रहा हूँ।" मृत घोड़े से यह कह वह अपने रास्ते पर चला गया।

इस घटना के एक सप्ताह बाद, वीर के घर के बाहर एक अच्छी नसल का घोड़ा बँधा था। उसके गले में एक बिल्ला था। उस पर लिखा था—"प्रत्यक्ष भेद ठीक किये जा सकते हैं।" वीर यह अनुमान कर कि वह घोड़ा गुणमणि ने ही भेजा था, बड़ा खुश हुआ।

एक महीना बीत गया। जिन राजकुमारों ने गुणमणि के स्वयंवर में भाग लिया था, उसका निश्चय जानने के लिए फिर आये। सब सोच रहे थे कि वह अवश्य भद्र से ही विवाह करेगी। परन्तु उसने सब के सामने स्पष्ट कहा कि वह वीर को ही पति के रूप

में स्वीकार करेगी। सब को आश्चर्य हुआ। पर भद्र गुस्से से जलने लगा।

"मैंने अभी तक इस वीर की होशियारी नहीं देखी है....विवाह होने से पहिले, द्वन्द्व युद्ध में मैं यह देख लेना चाहता हूँ कि वह रहता है, या मैं।"—भद्र ने कहा।

"अब शिकार के लिए चला जाय! शिकार से वापिस आने के बाद, मैं आप में से किसी के साथ भी लड़ने के लिए तैयार हूँ।"—वीर ने कहा।

अतिथि, जंगल में जाकर दिन भर शिकार खेलते रहे। शाम होने पर, सब अपना अपना शिकार लेकर वापिस आये। भद्र और वीर वापिस न आये। गुणमति डरने लगी, न जाने ये दोनों जंगल में किस दुर्घटना के शिकार हो गये हों। परन्तु, अन्धेरा होने से पहिले, कई जन्तुओं को मारकर, उनको साथ लेकर भद्र वापिस आ गया। वीर का कहीं पता न था। फिर सब के सब भोजन के लिए उठे। उस समय वीर वापिस आ गया। उसकी शक्ल-सूरत से लगता था, जैसे उसने किसी चीज़ का शिकार न किया हो। "इतनी देर बाद आये हो! बड़े बड़े जानवरों का शिकार किया

होगा। कहाँ है तुम्हारे शिकार!"— भद्र ने पूछा।

"मैने अधिक जन्तुओं का शिकार नहीं किया है, पर शिकार का मिलना, और न मिलना, यह किस्मत की बात है; यह सब जानते ही हैं।"

"तुमने जिसका शिकार किया है, उसे दिखाते क्यों नहीं हो! क्यों इधर उधर की बातें करते हो!"—भद्र ने उसे छेड़ा।

"यह रहा मेरा शिकार! देख!" कहते हुए, वीर ने अपने दुपट्टे में छुपाये हुए, एक मनुष्य का सिर निकालकर भद्र के पैरों के सामने फेंक दिया। वह भद्र के पिता दुर्जय का सिर था।

थोड़ी देर तक किसी के मुख से कोई बात न निकली। सब हैरान थे। पर बाद में वे सब बहुत खुश हुए। क्योंकि उस दुर्जय ने कइयों की हालत ख़राब कर रखी थी। सबकी बग़ल में वह छुरा-सा था। उस दुष्ट को इतने दिनों बाद, इस वीर ने तलवार के घाट उतार दिया था।

परन्तु भद्र के हाथ-पैर ठण्डे हो गये। वह पिता के भरोसे पर ही, घमण्ड से मनमानी किया करता था। उसको मारनेवाले वीर को देखकर, वह बहुत डर गया। इसलिए उसने वीर को द्वन्द्व युद्ध के लिए फिर न ललकारा। उसे पिता को मारने का बदला लेने का भी हौसला न हुआ। इसलिए भद्र को सब बुरा समझने लगे।

बाद में, गुणमणि का वीर से विवाह हुआ। जो राजा स्वयंवर के लिए आये थे, विवाह तक रहे। भद्र अपने पिता का क़िला छोड़कर थोड़ी सेना के साथ कहीं भाग गया। वह क़िला वीर के वश में आ गया। आसपास के राजाओं से मैत्री कर वह पत्नी के साथ, सुखपूर्वक राज्य करने लगा।

किं फलं?

एक जंगल में एक पेड़ था। वह देखने में आम के पेड़ जैसा था। उसके फल भी आम की तरह होते थे। उनका स्वाद और सुगन्ध भी आम की ही तरह था। परन्तु वे जहरीले थे। इसलिये अगर राहगीर उनको खाते तो वे मर जाते। उस पेड़ का और कोई नाम न था, इसलिये वह 'किंफलं' कहा जाता था।

उस पेड़ के पास एक गाँव था। गाँववाले जानते थे कि किंफलं ज़हरीले होते हैं। अगर यात्री वहाँ पड़ाव करते, तो अगले दिन गाँववाले आकर देखते, कोई फल खाकर मर जाता तो उसका रुपया-पैसा, माल-असबाब लूटकर वे ले जाते।

एक बार एक काफ़िला उस तरफ़ आया। पेड़ किंफलों से लदा पड़ा था। यात्री उन्हें खाने गये। पर काफ़िले के सरदार ने उन्हें खाने से रोका। उस रात को उन्होंने वहीं पड़ाव किया।

जब अगले दिन गाँववालों ने किसी को मरा न देख आश्चर्य से पूछा—"इस पेड़ पर इतने फल लगे हैं और आपने एक भी नहीं खाया!"

"मैंने ही मना किया था"—काफ़िले के सरदार ने कहा।

"क्यों!" गाँववालों ने पूछा।

"अगर खाने के फल ही होते तो तुम्हारे गाँववाले उन्हें पेड़ पर क्यों छोड़ते!"—सरदार ने पूछा।

गाँववाले शर्मिन्दा होकर चले गये।

बताओगे ?

★

१. पिछले दिनों भारत में कहाँ भूकम्प आया ?

२. दक्षिण में राष्ट्रपति का निवास कहाँ है, और उसको क्या कहा जाता है ?

३. हाइड्रोजन बम्ब के परीक्षण अमेरीका साधारण तौर पर कहाँ करता है ?

४. क्या फ़ोरमासा में चीनी साम्यवादी राज्य है ?

५. वोल्गा नदी कहाँ है ?

६. मिश्र का अध्यक्ष कौन चुना गया है ?

७. क्या भारत में यूरेनियम मिलता है ?

८. यूरेनियम किस काम में आता है ?

९. क्या सूर्य के किरणों से रसोई पकाई जा सकती है ?

१०. भारत के एक महान नेता का नाम बताओ, जो इस महीने में पैदा हुए ?

पिछले महीने के 'बताओगे ?' के प्रश्नों के उत्तर

१. विनायक चतुर्थी ।

२. हाँ ।

३. हाँ, साहित्य अकादमी ।

४. गंगोत्री से ।

५. यह तमिल का एक नीति ग्रन्थ है ।

६. ३१२ ।

७. ८२ प्रतिशत ।

८. हाँ ।

९. बैल ।

१०. अमृतसर में ।

नाविक सिन्दबाद

यद्यपि, मैं भोग-विलास में डूबा हुआ था, हर तरह के वैभव का आनन्द कर रहा था, तो भी मुझे संसार के कोने कोने में स्थित नये नये द्वीपों को देखने की इच्छा हुई। मैं बाज़ार आकर नया नया माल खरीद कर बन्दरगाह पहुँचा। जल्दी ही बन्दरगाह में एक सुन्दर नौका ने आकर लंगर डाला। समुद्र यात्रा के लिए आवश्यक सुविधाओं का उस नौका में पूरा प्रबन्ध था। उसके पाल भी बहुत आकर्षक थे। उस नौका को देखते ही मैं बहुत खुश हुआ और तुरत सारा माल उसी में लदवा दिया। उस नौका में कई और व्यापारी यात्रा कर रहे थे। उनको साथ सफ़र करता देख, मैं बहुत प्रसन्न हुआ।

उसी दिन नौका समुद्र यात्रा पर निकली। वह बहुत तेज़ी से चलने लगी। हम कई सप्ताह तक समुद्र में यात्रा करते रहे। कई द्वीपों में रुके। वहाँ के अधिकारियों का परिचय प्राप्त किया। वहाँ के व्यापारियों को अपना माल बेचा। मौका मिलने पर

दूसरी समुद्र-यात्रा

माल का अदला-बदला भी उनसे किया। आखिर हमारी नौका एक द्वीप में पहुँची। उस द्वीप के सौन्दर्य का वर्णन नहीं किया जा सकता। जहाँ देखो, वहीं ऊँचे ऊँचे पेड़ खड़े थे। उन पर तरह तरह के पक्षी चह चहा रहे थे। नदी-नाले बह रहे थे। पर उस द्वीप में मनुष्य का नाम न था।

हम सब ने उस द्वीप में आराम करना चाहा। कह-सुन कर कप्तान को भी लंगर डलवाने के लिए मना लिया। सब उतर कर वृक्षों के नीचे टहलने लगे। मैं थोड़ा खा-पीकर नाले के किनारे, वृक्षों के नीचे, हरी घास पर आराम करने गया। उस जगह खाना खाना ही, दावत खाने के बराबर था। धीमे धीमे भीनी भीनी हवा चल रही थी। हरी घास पर लेटा लेटा, मैं ऊँघने लगा।

जब मैं सोकर उठा तो द्वीप में कोई न था। घाट पर, नौका भी न थी। मुझे छोड़कर औरों को चढ़ाकर नौका चली गई होगी। समुद्र की ओर ध्यान से देखने पर, दूरी पर, नौका के पाल दिखाई दिये। वे भी आँखों से ओझल हो रहे थे।

मैं पागल-सा हो गया! क्या बताऊँ, मेरी हालत क्या हो गई थी! मेरा सर्वस्व उस नौका में लदा हुआ था। मुझ गरीब की उस निर्जन द्वीप में क्या हालत होगी! मेरी अक्ल जाती रही। "रे सिन्दबाद! तेरा घर-बार बरबाद हो गया है। क्या तेरी किस्मत, जिसने तेरी पहिली समुद्र यात्रा में रक्षा की थी, इस बार भी मदद करेगी? अगर एक बार सुराई हाथ से फिसलकर ज़मीन पर गिरकर न टूटी तो दूसरी बार तो टूटेगी ही!" मैं ज़ोर ज़ोर से चिल्लाने लगा।

मैं रोने लगा। अपनी निराशा को भूलने के लिए, मैं सिर पीट पीटकर चिल्लाने

लगा। "अरे अभागे! क्या तेरा बग़दाद में आराम से गुज़ारा नहीं हो रहा था कि बहुत मना करने पर भी फिर तुझ पर समुद्र यात्रा की धुन सवार हुई! कोई ऐसा भोग न था, जिसका तू आनन्द न कर रहा था! कौन-सी कमी तुझे हो गई थी कि फिर समुद्र-यात्रा पर निकला? पहिली यात्रा आराम से कटी थी क्या इसलिए फिर चले हो? सोचने से क्या फ़ायदा? जो पैदा हुआ है सो मरेगा ही।—" मैं पागल की तरह नीचे गिर गया।

धीमे धीमे मुझे असलियत का भान होने लगा। गुज़री हुई घटनाओं पर रोना अच्छा नहीं; भविष्य के बारे में ही सोचना चाहिये। मैं उठ खड़ा हुआ। थोड़ी देर इधर उधर लड़खड़ाता रहा। फिर सूझा कि इस तरह घूमना-फिरना भी अच्छा न था। कोई भी क्रूर जन्तु आसानी से हमला कर सकता था। इसलिए मैं एक ऊँचे पेड़ पर चढ़ बैठा। उस पेड़ से चारों तरफ़ देखा। चारों ओर सिवाय पेड़, पक्षी और पहाड़-पर्वत के और कुछ न दिखाई दिया। परन्तु एक तरफ़ कोई बड़ी चीज़, सफ़ेद सफ़ेद-सी दिखाई दी। मुझे जानने की इच्छा हुई कि वह क्या चीज़ थी। मैं पेड़ से उतरकर उस तरफ़ चल दिया। परन्तु क्योंकि अन्दर भय सता रहा था, इसलिए पैर जल्दी जल्दी नहीं उठते थे। आख़िर वह सफ़ेद वस्तु, एक बड़ी बुर्ज़ की तरह दिखाई देने लगी। शायद अन्दर जाने के लिए कोई रास्ता हो, यह देखने के लिए मैंने उसकी प्रदक्षिणा की। पर कहीं कोई रास्ता दिखाई नहीं दिया। फिर उस पर चढ़ने की सोची; पर वह संगमरमर की तरह चिकना था। कहीं पैर रखने की जगह न थी। यह जानने के लिए कि वह
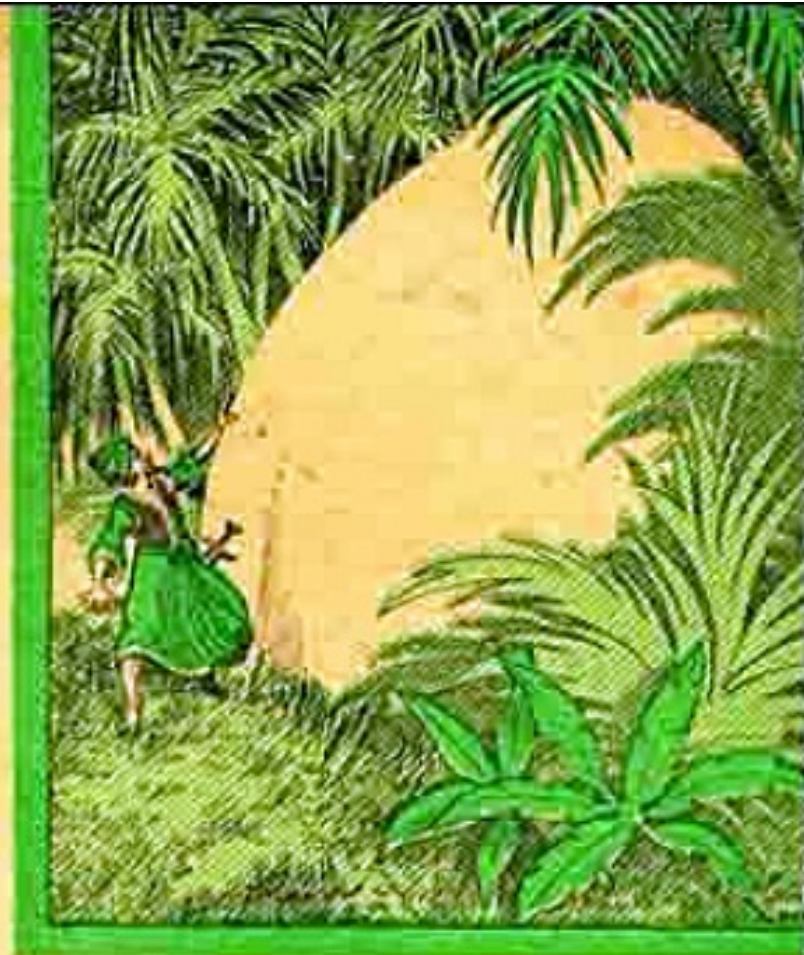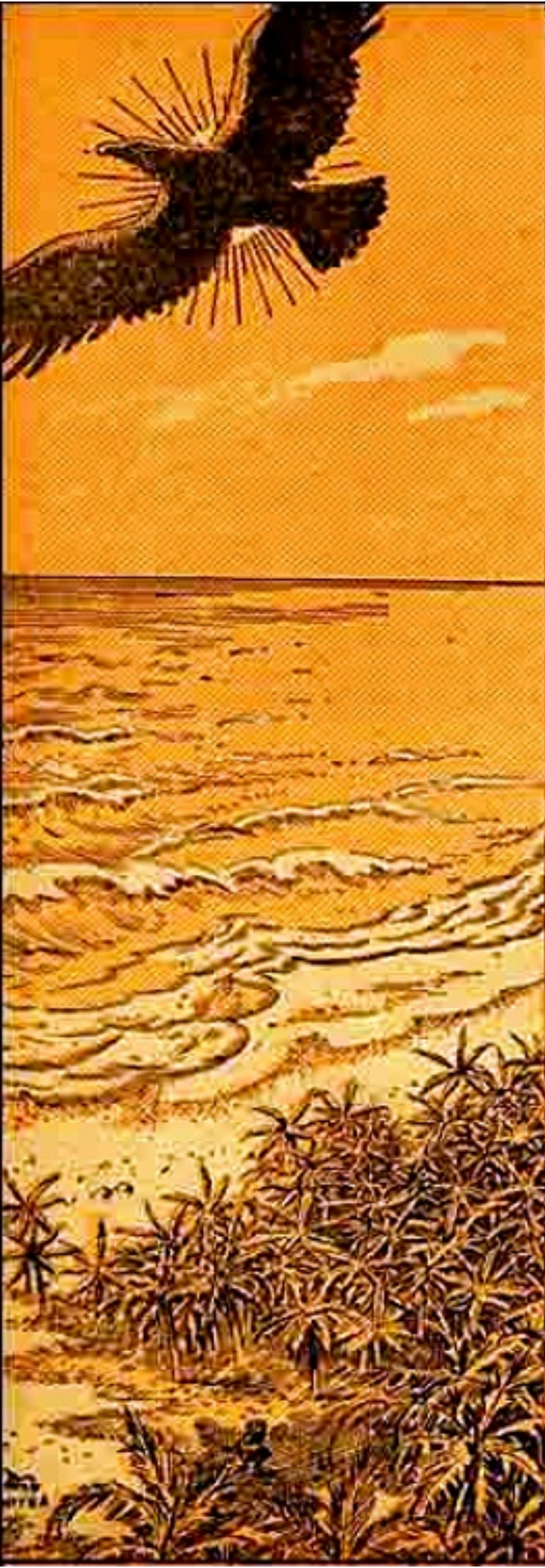
कितना बड़ा है, मैं उसके चारों ओर क़दम से नापता नापता गया; रेत पर मेरे पैरों के निशान गिनने से साफ़ पता लग गया कि उसकी परिधि क़रीब १२० फ़ुट थी।

मैं यह सोच ही रहा था कि उस विचित्र इमारत में कैसे घुसा जाय कि सूर्य छुप-सा गया और चारों ओर अन्धेरा छा गया। पहिले तो मैंने सोचा कि सूर्य को बादलों ने घेर लिया होगा, फिर सूझा कि गर्मियों में बादलों का क्या काम! जब मैं यह गौर से देख रहा था कि किसने सूर्य को घेर रखा है, एक बहुत बड़ा पक्षी, उसके सामने से पंख फड़-फड़ाता गुज़रा। उसके पंख इतने बड़े थे कि कुछ नहीं कहा जा सकता।

पहिले तो मुझे ही अपनी आँखों पर विश्वास न हुआ। पर बाद में, उन बड़े बड़े भयंकर पक्षियों की याद आ गई, जिनके बारे में मैंने सुन रखा था। वे पक्षी समुद्र के एक द्वीप में रहते हैं, वे हाथियों तक पकड़कर आसानी से उड़ जाते हैं, आदि आदि बातें, मैंने बचपन में ही नाविकों और यात्रियों के मुँह सुनी थीं। मुझे सूझा कि शायद यह पक्षी वही है और हो न हो वह बुर्ज, इसी का अंडा है। यह मेरा

अनुमान ठीक भी सिद्ध हुआ। क्योंकि वह पक्षी, उसी अंडे पर ही उतरा और दोनों पंख फैलाकर सेने लगा।

जब वह पक्षी अंडे पर उतर रहा था तो मैं भी औंधे मुँह रेत पर पड़ा हुआ था। जब मैंने उठकर देखा तो पक्षी का पैर एक बड़े पेड़ के तने से भी बड़ा दिखाई दिया। मैंने अपनी पगड़ी उतारी और उसको एक मोटी रस्सी की तरह पेल लिया। उससे मैंने अपने को उसके पैर की एक अँगुली से ज़ोर से बाँध लिया। मेरा ख्याल था कि कभी न कभी तो वह पक्षी उड़ेगा ही। अगर मैं भी उसके साथ उड़ा तो वह कहीं न कहीं मुझे ऐसी जगह ले जायेगा, जहाँ आदमी रहते होंगे। इस निर्जन द्वीप से तो खराब से खराब जगह भी भली थी।

उस पक्षी को ज़रा भी न मालूम था कि मैंने अपने को उसके पर की अँगुली में बाँध लिया था। मैं शायद उस के लिए, एक मक्खी था या मच्छर की तरह था।

मैं रात भर उसी हालत में रहा। कहीं ऐसा न हो कि मैं सोता रहूँ और वह उड़ जाये, मैं रात भर जागता रहा। परन्तु सवेरा होने पर ही वह अंडे पर से उठा।

एक भयंकर आवाज करके, वह आकाश में उड़ चला। मैं नहीं कह सकता कि वह कितनी दूर ऊपर उड़ रहा था। वह बहुत ऊँचे उड़कर, जल्दी जल्दी नीचे उतरने लगा। उसकी गति इतनी तेज़ थी, कि मुझे अपना वज़न ही नहीं महसूस हो रहा था। आखिर वह पक्षी एक पत्थर पर बैठा। मैं तुरत कमर से बन्धी अपनी पगड़ी उतारने लगा। मुझे डर था कि कहीं वह फिर न उड़ जाय और मैं उसकी अँगुली में ही अटका रहूँ। मैं अपने को खोलकर, उसकी नज़र बचाकर एक तरफ़ छुप जाने की सोच ही रहा था कि वह पक्षी फिर उड़ा। उसके नाखून में एक बहुत बड़ा साँप लटका दिखाई दिया। मेरे देखते देखते वह पक्षी साँप को लेकर दूर उड़ गया।

मैंने जो चारों ओर घूमकर देखा तो मेरे दिल की धड़कन रुक-सी गई। क्यों कि जहाँ मैं पहुँचा था, वह बहुत बड़ी, गहरी घाटी थी। चारों ओर बड़े बड़े पहाड़ थे। उनकी चोटी देखने की कोशिश करता तो ज़रूर सिर की पगड़ी गिरती। खैर, पहाड़ ऊँचे तो थे, उन पर चढ़ा भी नहीं जा सकता! उनके किनारे ठीक सीधे कटे हुए-से थे। उन पर मनुष्य के लिए चढ़ना सम्भव न था।

उस घाटी को देखकर मैं रो पड़ा। उन फल के वृक्षों को, नदी-नालों को छोड़कर मुझे यहाँ क्यों आना पड़ा? यहाँ हरी घास का एक पत्ता नहीं, पीने को बूँद भर पानी नहीं। यहाँ से बाहर जाने का रास्ता भी नहीं। इस भयंकर प्रदेश में, भूख और प्यास से तड़प तड़पकर मरने के सिवाय और कोई रास्ता नहीं। एक आफ़त से निकलने की कोशिश की और उससे भी बड़ी आफ़त में जा फँसा। (अभी और है)

मित्र-भेद

"एक दिवस था क्षुधित बहुत ही
गोमायु नामक एक स्यार,
नहीं मिला था उसे कहीं भी
उस दिन थोड़ा भी आहार।

रहा भटकता इधर उधर यह
जा पहुँचा रण के मैदान,
कभी लड़ाई हुई जहाँ थी
पर था अब बिलकुल सुनसान।

उग आये थे झाड़ वहाँ पर
बिखरे थे मानव कंकाल,
और पड़ा था वहीं कहीं पर
एक ढोल भी बहुत विशाल।

हवा तेज़ थी, टकराती थी
रह रहकर जब तरु की डाल,
बज उठता था ढोल उसी से
करके रह रह शब्द कराल।

गोमायु के भी कानों में
पड़ी ढोल की यह आवाज़,
भय-कंपित हो सोचा उसने
नहीं खैर प्राणों की आज।

स्वर ही जब इतना भीषण तो
जन्तु न जानें कैसा होगा,
देख अगर यह ले मुझको तो
उसके मुख में जाना होगा।

यह विचार करके ज्यों ही वह
हुआ भागने को तैयार,
त्यों ही उसके मन में फिर से
जागा नूतन एक विचार।

उसने सोचा शब्द मात्र से
नहीं मुझे बनना है भीत,
खोज करूँ पहले कारण की
यही सदा चतुरों की रीत।

यों मन में निश्चय करके वह
बढ़ा शान्त होकर उस ओर,
आता शब्द जिधर से था वह
रह रह कर गर्जन-सा घोर।

'भारतीभक्त'
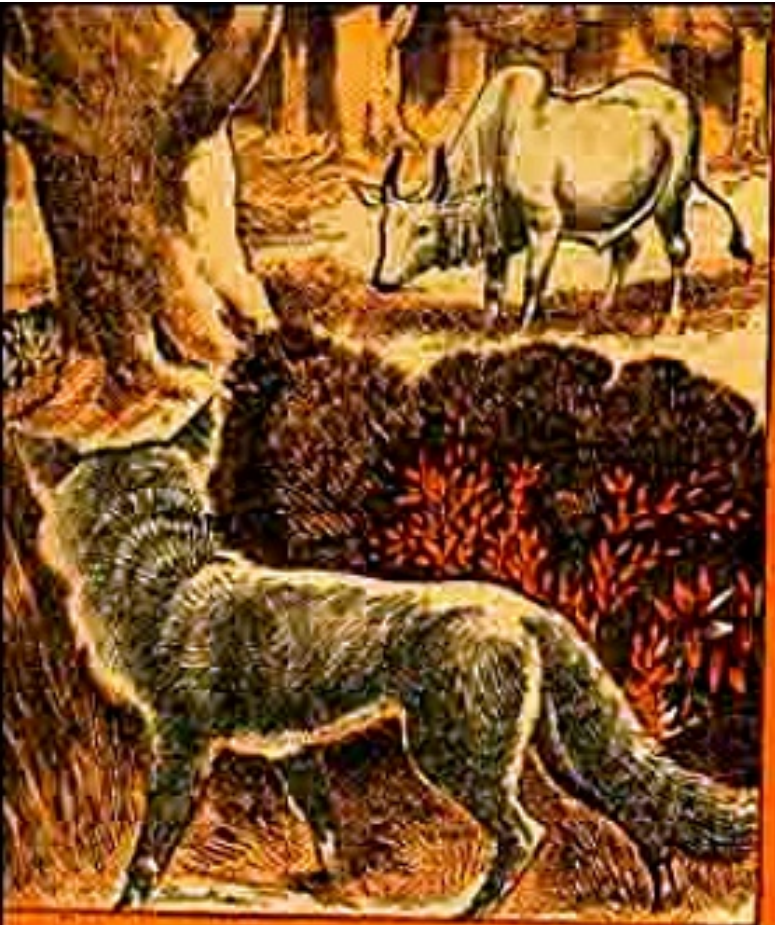
निकट पहुँचकर गोमायु ने
देखा भारी-भड़कम ढोल,
करती थी आवाज़ कि जिस पर
तरुवर की शाखाएं डोल।

साहस करके वह भी उस पर
लगा मारने अपने हाथ,
फिर तो गूंज उठीं आवाज़ें
ज़ोरों से कितनी इक साथ!

ईश-कृपा से ही शायद यह
जन्तु मिला सीधा है, आज
इसको खाकर भूख मिटेगी
कई दिनों की निश्चय आज।

यही सोच खुश होकर उसने
गड़ा दिये उस पर निज दाँत,
लेकिन चमड़ा कड़ा बहुत था
टूट गयी दाँतों की पाँत।

आखिर छेद किया जब उसमें
बहुत बड़ी मिहनत के बाद,
तब देखा उसने घुसकर 'हा,
श्रम सारा यों ही बरबाद!'

नहीं रक्त या मांस वहाँ था
खाली था बिलकुल ही ढोल
अन्दर जाकर जान गया वह
बड़े ढोल की सारी पोल!

इसीलिए मैं कहता राजन,
शब्दमात्र से मत हो भीत!"
"लेकिन अब तो डरे हुए हैं
मेरे सभी कुटुम्बी-मीत!"

"नहीं दोष इसमें उनका, वे
स्वामी के अनुगामी दास,
धीरज कैसे रखें भला वे
छोड़ रहे जब प्रभु ही आस?

साहस से लें काम आप अब
करें प्रतीक्षा तब तक मौन,
जब तक लौटूं मैं न देखकर
गरज रहा वह वन में कौन!"

पिंगलक सुनकर दंग रह गया
दमनक के साहस की बात,
झट बोला—"कैसे जाओगे,
यह तो बहुत भयानी रात!"

शीश झुकाकर तब दमनक ने
कहा—"अभी आज्ञा महाराज!
स्वामी की खातिर मैं सब कुछ
कर सकता हूँ निर्भय आज।"

इतना कह औ' लेकर आज्ञा
गया उधर दमनक तत्काल,
जिधर हुँकरता संजीवक था
तोड़ रहा सींगों से डाल।

सीधा-सादा महज बैल यह
नहीं जन्तु कोई विकराल—
देख खुशी के मारे दमनक
हुआ बहुत उस क्षण बेहाल।

बना लिया झट उसने अपना
संधि और विग्रह का ज्ञान,
और वहाँ से किया तुरत ही
पुलक भरे मन से प्रस्थान।

पिंगलक से जब आकर उसने
कहा—"देख आया सरकार!"
तो पिंगलक को सहसा उस पर
हुआ नहीं कुछ भी एतबार।

"ऐसा क्या संभव भी है रे!"
बोला पिंगलक ले निश्वास—
"हाँ, संभव है स्वामी मेरे,
करें आप मुझ पर विश्वास।

ज़ोर बुद्धि का दिखला करके
बना उसे दूँगा मैं मीत,
फिर तो हो जाएगा पल में
दास आपका ही वह क्रीत!"

"अगर यही है बात सत्य तो
तुम्हें बनाता मंत्री आज
जो करते थे पिता तुम्हारे,
करना वही तुम्हें है काज!"

दुष्ट की नीयत

किसी ज़माने में काशी राजा के एक लड़का हुआ करता था। वह बड़ा दुष्ट था। उसको हर कोई नाग की तरह देखा करता था।

एक दिन राजकुमार अपने नौकरों के साथ गंगा में स्नान करने गया। जब वे गंगा के पास पहुँचे तो भयंकर तूफ़ान आने लगा। उस तूफ़ान में गंगा में उतरने के लिए नौकर डर के मारे आगा-पीछा कर रहे थे। परन्तु राज कुमार ने उनको रौब से हुकम दिया "मुझे तूफ़ान में ही स्नान करना है। मुझे नदी के बीच में ले जाओ।" नौकर तो पहिले ही उससे चिढ़े हुए थे। उसको गंगा के बीच ले जाकर छोड़ दिया और वे किनारे पर तैर आये। राज महल में जाकर उन्होंने राजा से कहा—"महाप्रभू! राजकुमार हमारे साथ ही गंगा में उतरे थे। उन्हें बहुत खोजा, पर उनका पता नहीं लग रहा है।"

इधर, राज कुमार नदी के तीव्र प्रवाह में बहता जाता था। उस तूफ़ान में उसकी आवाज़ सुननेवाला कोई न था। सौभाग्य से उसके हाथ में नदी में बहता एक पेड़ का तना आ गया। वह उस पर चढ़कर लेट गया। कुछ दूर जाने के बाद, एक सांप उस पर आ कूदा। फिर थोड़ी दूर जाने के बाद, अपनी जान बचाने के लिए एक चूहा भी उस पर आ गया। और थोड़ी दूर आने पर वर्षा की चोट से एक तोता भी, नदी के किनारे के पेड़ पर से पेड़ के तने पर गिरा।

उन चारों प्राणियों को लेकर, वह पेड़ का तना बहुत दूर बहता गया। राज कुमार रास्ते भर मदद के लिये चिल्लाता रहा।

श्री सुबोध कुमार

नदी के मोड़ पर एक सन्यासी छोटी-सी कुटिया में रहा करता था। उस सन्यासी को राजकुमार की आवाज सुनाई दी। मूसलधार वर्षा में बाहर आकर उसने नदी में बहते पेड़ के तने को और उस पर चिपटे राजकुमार को देखा।

तुरत वह नदी में कूदा और तैरता तैरता पेड़ के तने को किनारे पर खींच लाया। राजकुमार को अपनी कुटिया में ढोकर ले गया। वह फिर बाहर आकर तने पर पड़े, सांप, चूहे, और तोते को भी अन्दर ले गया। क्योंकि वे मूक पशु थे, सन्यासी ने पहिले खिला-पिलाकर उनकी सेवा-शुश्रूषा की, फिर उसने राजकुमार की खबर ली।

राजकुमार को यह देख सन्यासी पर बड़ा गुस्सा आया। क्योंकि उसने उन तुच्छ प्राणियों की पहिले परवाह की थी; फिर उसकी। इसलिए वह आगबबूला हो रहा था। परन्तु वह कुछ कर न सकता था। लहू का घूँट पीकर रह गया।

दो दिन की सेवा शुश्रूषा के बाद राज कुमार, सांप, चूहा, तोता सब चंगे हो गये। तब तक तूफ़ान भी ख़तम हो चुका था। सांप ने सन्यासी से आज्ञा माँगते हुए कहा—"स्वामी! मैं पहिले जन्म में बहुत बड़ा रईस था। परन्तु बड़ा कंजूस था। गंगा के किनारे फ़लानी जगह चालीस करोड़ रुपये रखकर मैं मर गया था। बाद में मैं सांप के रूप में जन्मा और उस धन की रखवाली करता, मैं अब ज़िन्दगी बसर कर रहा हूँ। सच पूछा जाय तो मुझे उस धन की कोई ज़रूरत नहीं है। आप जब चाहें, वहाँ आकर मुझे बुलाएँ, तो मैं आप के सामने हाज़िर हो जाऊँगा और वह सारा धन आपको दे दूँगा।"

उसी तरह चूहे ने भी कहा—"स्वामी! जहाँ मैं रहता हूँ, उस जगह तीस करोड़ रुपया मेरा गड़ा पड़ा है; आप जब कभी आकर मुझे बुलाएंगे तो मैं वह सारा धन आपको दे दूँगा"

फिर तोते ने कहा—"स्वामी! मेरे पास रुपया-पैसा तो नहीं है; पर आप जितना धान चाहें, उतना धान आपको दे सकता हूँ। गंगा के किनारे फलाने पेड़ के पास आकर मुझे आवाज़ दीजिये"

राज कुमार ने जाते जाते कहा—"स्वामी! मेरे राजा बनने पर आप काशी तशरीफ़ लाइये। आप जो चाहेंगे, मैं बिना किसी हिचकिचाहट के आपको दे दूँगा।"

थोड़े दिन बीत गये। स्वामी इन चारों की नीयत परखने के लिए निकला। रास्ते में उसने सांप, चूहा, और तोते को आवाज़ लगाई। वे अपनी अपनी जगह से बाहर आये और अपने वचन के अनुसार धन, और धान देने के लिए तैयार हो गये। परन्तु सन्यासी ने कहा—"मैं किसी और काम पर जा रहा हूँ। सोचा कि तुम्हें भी देखता जाऊँ। अपना धन और धान अपने पास ही रखो। जब ज़रूरत होगी तब ले

देंगा।" यों कहकर वह सन्यासी काशी की ओर चलता गया।

इस बीच में काशी का राजा मर चुका था और राजकुमार उसकी जगह पर राजगद्दी पर बैठ गया था। जुलूस में जाते हुए नये राजा ने दूरी पर सन्यासी को देखा। उसने सोचा कि कइ उससे कुछ माँगने आया है। उसने अपने सिपाहियों से कहा—"यह जो ढोंगी, चोर सन्यासी दिखाई दे रहा है, उसको पकड़कर हाथ-पैर बाँध दो और हर गली की नुकड़ पर उसे खड़ा कर लाठियों से खूब पीटो। फिर ले आकर उसका सिर काट दो।"

हुक्म के मुताबिक सिपाहियों ने सन्यासी के हाथ-पैर बाँध दिये। हर गली की नुकड़ पर उसको पीटते-पीटते घसीटने लगे। सन्यासी सब जान गया। जब सिपाही उसे पीटते तो वह चिल्लाता—"मानव से पेड़ का तना भला"

इस अजीब सज़ा को देखने के लिए, जो लोग, सन्यासी के चारों ओर इकट्ठे हो गये थे, वे उसकी यह बात सुनकर चकित थे। "आप कौन हैं? आपने क्या क़सूर किया है, जिससे कि आपको यह सज़ा

मिल रही है ! 'मनुष्य से भला पेड़ का तना' कहने का क्या मतलब है ?"— सन्यासी से उन्होंने बार बार पूछा। सन्यासी ने जो कुछ गुज़रा था, उन्हें सुनाते हुए कहा—"जब आपका राजा गंगा में डूबकर मर रहा था तो एक पेड़ के तने ने उनकी जान बचाई थी। मैंने राजा के प्राण बचाये, और वे उसके लिये जैसा मेरा उपकार कर रहे हैं, वे आप देख ही रहे हैं।"

इस अन्याय को जनता सहन न कर सकी और तुरन्त खौल उठी और अपने दुष्ट राजा को सड़क के बीचों-बीच दिन दहाड़े मारने के लिये उतावला हो उठी। वे तो पहिले ही राजा से क्रुद्ध थे। परन्तु सन्यासी ने उन्हें समझा-बुझाकर, फिर एक बार राजा की जान बचाई।

राजा ने सन्यासी के चरण पकड़कर कहा—' स्वामी मेरा अपराध क्षमा कीजिए। अब से आप मेरे मुख्य मन्त्री बनिये, और मुझे सिखाइये कि कैसे रहना चाहिये और कैसे राज्य-पालन करना चाहिये।"

सन्यासी मन्त्री का कार्य करने के लिए मान गया। परन्तु सारे राज्य में अराजकता फैली हुई थी। खज़ाना खाली था। जनता के पास खाने-पीने की सामग्री भी न थी। सन्यासी जान गया कि राजा की मूर्खता के कारण राज्य की बुरी हालत हो गई थी। तुरन्त उसने गंगा के किनारे रहनेवाले, सांप, चूहे, और तोते को बुलवाया। उनको धन, और धान, अपने वचन के अनुसार राजा के लिये देने के लिये कहा और उनके काशी नगर में रहने और खाने-पीने का प्रबन्ध करवाया। तब से राजा अपना अहंकार भूल गया और सन्यासी की सलाह पर सुखपूर्वक राज्य का परिपालन करने लगा।

मनुष्य और संघ

प्रस्तर युग का मनुष्य प्रधानतः शिकारी और मांसाहारी था। क्योंकि शिकार ही उसकी आजीविका का आधार था, इसलिये शिकार के लिए ही उसने अपने उपकरण तैयार किये। उसमें कुशलता दिखाकर वह संघ-जीवी बना।

मनुष्य शाकाहारी 'प्राइमेट्स' से बदला, पर हिम युग में, फल फूलों के वृक्ष नष्ट हो गये, और उनकी जगह जन्तुओं के उपयोग में आनेवाले घास के मैदानों के पैदा हो जाने के कारण, मांसाहारी मनुष्य को शिकारी भी होना पड़ा।

पत्थर को नोकीला बनाकर, भाले की तरह बना बाण ही सदियों तक मनुष्य के शिकार का साधन रहा। नियान्डरताल मनुष्य, भी इसी बाण पर पत्थर की नोक चढ़ाकर शिकार किया करते। वे शिकार में बड़े माहिर भी थे। वे बड़े बड़े हाथियों का शिकार किया करते। हाथी पीछा करते, दूर से ही उसे बाणों से घायल कर, उसके रक्तहीन हो जाने पर, निस्सहाय अवस्था में उसको पकड़कर मार देते थे। इतनी मेहनत करने पर, उनको मांस, विशाल चर्म, उपयोगी दान्त, आग में जलाने के लिए चरबी से सनी हड्डियाँ मिलती थीं। इन विशाल पशुओं का शिकार करने के लिए, कई मनुष्यों को एक साथ मिलकर काम करना पड़ता था। इस सामूहिक प्रयत्न ने ही प्रस्तर युग में, मनुष्य के लिये नया मार्ग दिखाया। अनेक कुटुम्ब मिलकर शिकार में भाग लेते।

क़रीब २५ हज़ार वर्ष पूर्व जिस भूमि का आदिम जातियों ने शिकार के लिए उपयोग किया था, उसके बारे में अब कुछ जानकारी फ्रान्स में मिली है। इस इलाके में एक लाख जंगली घोड़ों की हड्डियाँ मिली हैं।

तब मनुष्य ने जन्तुओं को पालना नहीं सीखा था। परन्तु कई मनुष्य मिलकर, झुण्डों में घूमने-फिरनेवाले जंगली घोड़ों, जंगली भैंसों और अन्य जन्तुओं का शिकार करना वे अच्छी तरह जान गये थे। उन जन्तुओं का मांस, और चर्म ही उनके काम में आते थे। प्रस्तर युग में उन्होंने जिन पशुओं का शिकार किया, उनका चित्र भी उन्होंने अपनी गुफाओं में बनाया।

बादल मेरे धीरे आओ !

[प्रो. श्री वसंत कुमार, एम. ए., पटना - ४]

बादल मेरे धीरे आओ........!

मुझको अपनी पीठ चढ़ाकर
फुदक फुदक उड़ जाओ !
मामा के घर अम्मा मेरी
मुन्ना के संग रहती
बाबूजी छोड़ते न मुझको
वह भी भूली रहती
अम्मा के घर चुपके लेकर
मुझे जल्द पहुँचाओ !
बादल मेरे, धीरे आओ !

वहाँ पहुँच तुम मुन्ना को भी
मेरे साथ बिठाना
वह रोयेगा नहीं, हमें
परियों का देश दिखाना
रात अगर हो तो चकमक
बिजली के दीप जलाओ !
बादल मेरे, धीरे आओ !

चंदामामा के घर ही हम
दूध - भात खायेंगे
माँ रोयेगी तो भी हम फिर
यहाँ नहीं आयेंगे
बहुत रुलाती वह, तुम मुझको
उसकी गोद न लाओ !
बादल मेरे, धीरे आओ !

लल्लू, मोहन को ऊपर से ही
हम ललचायेंगे
बने काठ के घोड़े उनके
हमें न छू पायेंगे
अगर कहीं वे छूने दौड़ें
मूसलाधार बहाओ !
बादल मेरे, धीरे आओ !

लेकिन देखो, तुम न गरजना
इससे डर लगता है
मैं रोऊँ या नहीं, मगर
मुन्ना सुनकर रोता है !
बाबूजी आ जायेंगे,
तुम झट से मुझे चढ़ाओ !

बादल मेरे धीरे आओ.......!!

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

दिसम्बर १९५६ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें।

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिख कर निम्नलिखित पते पर ता. ५ अक्तूबर के अन्दर भेजनी चाहिये।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन
वडपलनी :: मद्रास - २६

अक्तूबर – प्रतियोगिता – फल

अक्तूबर के फ़ोटो के लिये निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनके प्रेषक को १० रु. का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो :
'हम तो हैं धरती के लाल!'

दूसरा फ़ोटो:
'नाच दिखाकर करें कमाल!!'

प्रेषक : श्री विजय कुमार गुप्ता, ५१८५ बसन्त रोड, पहाड़ गंज, नई देहली।

" ताश की रानी "

"ताश की रानी" मेरा अपना जादू है, जिसे मैं अब भी दिखाता हूँ।

जादूगर अपने ताश के पत्ते लाता है। फिर पाँच दर्शक, जो पांच भिन्न जगहों से लिये जाते हैं, पांच पत्ते चुनते हैं। वे पत्ते देखकर फिर जादूगर को दे देते हैं। जादूगर उनको अपने पत्तों में मिला लेता है। तब जादूगर के हुक्म पर "ताश की रानी" बाहर निकलती है।

"ताश की रानी" अच्छी पोशाक पहनती है—उसके सिर पर एक मुकुट होता है।

जादूगर ताश के पत्तों को एक थाल में रख कर "ताश की रानी" को दे देता है और रानी भी थाल लेकर चुपचाप खड़ी रहती है। जादूगर दर्शकों का ध्यान मुकुट की ओर आकर्षित करता है। तब पिस्तौल चलाई जाती है और पिस्तौल की आवाज़ के साथ पाँचों पत्ते मुकुट के पाँच भागों से खड़े हो जाते हैं, जैसा कि चित्र में दिखाया गया है।

एक तो चित्रवाला पत्ता होता है। दूसरा "सेवन आफ़ हार्टस," तीसरा "एस आफ़ स्पेड्स" चौथा, "ऐट आफ़ डायमन्ड्स" और आखिर "फाइव आफ़ क्लब्स" होता है। निचले चित्र में मुकुट का पिछला भाग दिखाया गया है। जिसमें पाँचों पत्तों को पीछे मोड़कर रखा गया है और उनको सूइयों के द्वारा एक साथ रखा गया है, जो दो छेदों में से गुजरती हैं। तब सूइयों को काले धागे से बाँध दिया जाता है, जो तीसरे छेद में से चौथे छेद को पहुँचाया जाता है।

क्योंकि जब काला धागा खींचा जाता है तो सभी सुइयाँ एक साथ छूट जायेंगी और पत्ते खड़े हो जायेंगे। "ताश की रानी" स्वयं धागा खींचती है। मुकुट को जादू से पहिले मेज़ पर रखकर ठीक तरह तैयार कर लेना चाहिये। बक्स पर इसको सिर्फ़ सिर पर धर लेना होता है और धागे को पकड़ लेना होता है जिसको जादूगर के इशारे पर खींच देना होता है।

जादूगर के लिये कभी कभी पाँच दर्शकों पर पाँच पत्ते थोप देना बड़ा मुश्किल हो जाता है। आपने देखा होगा कि "भिन्न" शब्द किसी और टाइप में लिखा गया है—जहाँ मैंने कहा है कि पाँच दर्शकों को पाँच पाँच भिन्न भिन्न जगहों से लो। मैं ऐसे पत्ते इस्तेमाल करता हूँ, जो सबके सब बराबर हैं। मुकुट में जब कि पाँच अलग अलग पत्ते हैं, परन्तु मैं एक ही पत्ता रखता हूँ। मानिये "एस आफ़ स्पेड्स" के सब पत्ते मेरे हाथ में बराबर हैं। मैं पहिले एक दर्शक के पास जाता हूँ और उसको पहिला कार्ड याद करने के लिये कहता हूँ। फिर दूसरे के पास आकर दूसरा पत्ता दे देता हूँ। बाकी तीन पत्ते भी इसी तरह दे दिये जाते हैं। फिर सब पत्ते वापिस ले लिये जाते हैं और मिला दिये जाते हैं। उसके बाद पाँचों पत्ते मुकुट पर पिस्तौल के छूटते ही दिखाई देते हैं। तब जादूगर हिम्मत से कहता है कि उनके पत्ते मुकुट पर हैं। दर्शक उनको देखकर पहिचान लेते हैं। वे यह नहीं समझ पाते कि उनको धोखा दिया गया है।

जादू की तारीफ़ होने लगती है। मुझे आशा है कि आपको भी यह जादू पसन्द आयेगा।

रंगीन चित्र-कथा

एक दिन का राजा—९

मसूर को थोड़ी दूरी पर देख अबू ने अपनी पत्नी से कहा – "मैं सोच ही रहा था कि खलीफ़ा और रानी, कौन मरा है, इस बात को लेकर आपस में झगड़ेंगे। खलीफ़ा ने मसूर को भेजा है और वह आ रहा है। यह हमारे लिये सच्ची परीक्षा है। तुम इस तरह लेट जाओ, जैसे मर गई हो।" जब मसूर पहुँचा तो गन्ना दुपट्टा ओढ़कर लेटी हुई थी। अबू उसके

पास बैठा लगातार आँसू बहाता रोता जाता था। मसूर ने उसको दिलासा दिलाया और वापिस जाकर खलीफ़ा से कहा कि मौत गन्ना की हुई है।

यह सुनते ही जुबेदा खौल उठी। उसने मसूर पैर चप्पल फेंकी, और फिर बुढ़िया दादी को यह मालूम करने के लिए भेजा कि कौन मरा है। दादी को दूरी पर देखते ही अबू मुर्दा बनकर लेट गया। जब वह पहुँची तो अबू फ़र्श पर पड़ा हुआ था और उसकी बग़ल में गन्ना सिर पीट पीटकर रो रही थी। दादी ने उसको ढाढ़स बँधाया, खुद उसकी आँखों में भी तरी आ गई। राजमहल में जाकर उसने कहा कि अबू की ही मौत हुई है।

दो को भेजा गया और दोनों अलग अलग खबर लाये।

"ज़रूर इसमें कुछ है। आओ, हम सब जाकर पता लगाएँ कि आख़िर सच क्या है।"—खलीफ़ा ने कहा।

खलीफ़ा, जुबेदा, नौकर-नौकरानियाँ सब मिलकर अबू अल हसन के घर की ओर चले। उनका आता देख अबू ने कहा—"....श्रीमती जी! अब पोल खुलने जा रही है। हम दोनों को मरना होगा। आओ।"

दोनों ने दुपट्टा ओढ़ लिया। मक्का की ओर पैर रख कर, मुर्दे की तरह लेट गये। इतने में खलीफ़ा वौरह आये।

"अरे....गन्ना....। पति को मरा देख....क्या तेरा दिल टूट गया था कि तू भी मर गई!" जुबेदा ने कहा। उसने दुःख में भी अपनी हार न माननी चाही।

"मैं नहीं मानूँगा कि गन्ना के लिए अबू मर गया है"—खलीफ़ा ने कहा। वह भी अपनी हार मानने के लिए तैयार न था।

"नहीं अबू पहिले मरा था।"—जुबेदा ने कहा।

"नहीं, गन्ना पहिले मरी थी।"—खलीफ़ा ने कहा।

फिर दोनों आपस में झगड़ने लगे।

'इस घर में नौकर कहाँ हैं! उनसे पूछने पर सच मालूम किया जा सकता है।"—जुबेदा ने कहा।

"हाँ, जो यह बताएगा कि कौन पहिले मरा है, मैं उसको दस हज़ार दीनारें ईनाम दूँगा।"—खलीफ़ा ने कहा।

"मुझे दस हज़ार दीनारें दिलवाइये हुज़ूर! कलेजा थामकर मैं ही दो बार मरा हूँ। मैं अबू अल हसन।—" दुपट्टे के नीचे से अबू ने कहा।

यह सुनते ही खलीफ़ा सारी चाल समझ गया। वह हँसा।

अबू और गन्ना उठे। पैसा पाने के लिए जो जो तकलीफ़ें उन्हें झेलनी पड़ी थीं, वे सब सुना दीं। खलीफ़ा से उन दोनों ने माफ़ी माँगी। खलीफ़ा और जुबेदा ने उन्हें माफ़ कर दिया। खलीफ़ा जान गया कि अबू की ज़रूरतों का ख्याल न करना उसका गुनाह था। बड़े वज़ीर के साथ उसने अबू का वेतन भी निश्चित कर दिया और उसको हमेशा के लिए अपने राज महल में ही कर्मचारी बना लिया।—(समाप्त)

समाचार वगैरह

समाचार पत्रों से मालूम हुआ कि लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक की जयन्ती के अवसर पर काल्पी आदि-वासी कल्याण समिति के छात्रों ने यह शपथ ली कि झूठ नहीं बोलेंगे। इसके साथ ही छात्रों ने गन्दी भाषा न बोलने की भी प्रतिज्ञा की थी।

* * *

इधर सरकार की तरफ़ से रेल्वे सामग्री प्रदर्शन कक्ष दिल्ली, कलकत्ता, बम्बई और मद्रास में कायम किये गये थे। उनका यह उद्देश्य था कि इस प्रदर्शन की सामग्रियों को देखने से जनता और उद्योग में लगे हुए लोगों को यह मालूम हो कि रेलों की क्या आवश्यकता है और कितनी उन्नति हमें अभी करनी बाकी है। इस समय भारतीय रेलों के उपयोगार्थ २५ करोड़ रुपये की सामग्रियाँ विदेशों से प्रति वर्ष खरीदनी पड़ती हैं।

* * *

हाल ही में अमेरीका में फ़ीते की सहायता से काम करनेवाला बिजली का एक नया टाइप राइटर तैयार हुआ है। इस टाइप राइटर में ऐसी सूचनाओं का संग्रह किया जा सकता है, जिन्हें
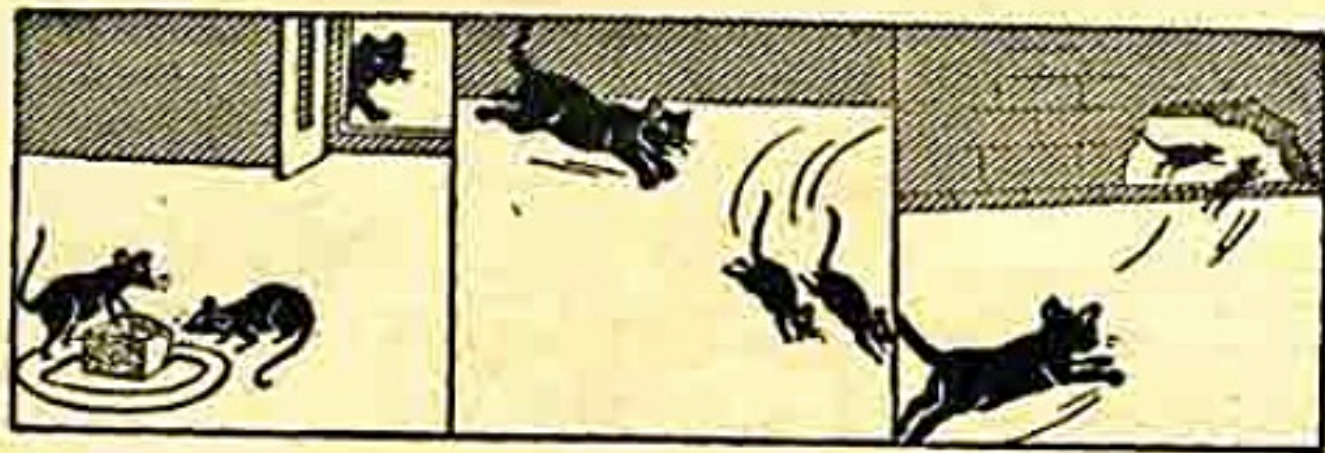
बाद में टाइप करने की आवश्यकता पड़ती हो! समय आने पर यह ऐसी समस्त सूचनाओं को स्वयं टाइप कर देता है। इसी मशीन द्वारा पत्र और लिफ़ाफ़े पर अपने आप ही पते छप जाते हैं। इसका नाम है: 'फ़्लैक्सो राइटर'। इस मशीन द्वारा एक मिनट में १०० शब्द टाइप हो सकते हैं।

* * *

समाचार पत्रों में यह पढ़ने को मिला कि फ्रान्स में एक मज़बूत आदमी एक नये तरीके का तमाशा अक्सर दिखाता रहता है। इस बलवान व्यक्ति का नाम 'जानलीगाल' है। ये अपने सिर पर एक वज़नदार गोल चक्कर रखते हैं जिसके चारों तरफ़ ६ झूले लटकाये जाते हैं और उन झूलों में छः मज़बूत और तन्दुरुस्त बच्चों को बिठाकर तमाशा करते हैं। जानलीगाल ८०० पौंड का वज़न अपने सिर पर उठा सकते हैं।

* * *

बताया जाता है कि पिछले दिनों बांदा में एक बुन्देल नव विवाहित दम्पति केन नदी पार कर रहा था। वर्षा के कारण नदी उफ़ान पर थी और नाव में सिवाय वर और वधू के कोई दूसरे नहीं थे। नाव के लुढक जाने से वर नदी में गिर गया। वह तैरना नहीं जानता था और डूबने लगा। मल्लाह भी साहस न कर सके! इस स्थिति में तैरना जाननेवाली उस नव विवाहित वधू ने अपना घूँघट उतार फेंका और कपड़े कसकर नदी में कूद गयी। थोड़ी देर के बाद वह अपने पति को पकड़ कर किनारे पर ले आई और उपचार आदि कर स्वस्थ किया।

चित्र - कथा

एक दिन दास अपना कैमेरा लेकर वास के यहाँ गया और उसका फ़ोटो खींचने के लिए उसे नज़दीक के एक बगीचे में ले गया। उनके साथ 'टाइगर' भी था। दास ने वास को एक पेड़ के पास स्टूल पर बैठा दिया और कैमरा ठीक करके 'एक....दो....तीन' कहकर कैमेरे का बटन दबा ही दिया था कि 'टाइगर' वास के सामने कूद गया! पर दास ने कुछ ध्यान नहीं दिया! जब फ़िल्म को धुलाकर प्रिन्ट करा लिया तो उसमें वास के मुँह पर 'टाइगर' की पूँछ मूँछों की तरह अंकित थी। दोनों एक दूसरे के मुँह ताकते रहे!

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press (Private) Ltd., and Published by him for Chandamama Publications, from Madras 26—Controlling Editor: SRI 'CHAKRAPANI'

Photo by P. R. Shinde

पुरस्कृत परिचयोक्ति

'नाच दिखाकर करें कमाल !!'

प्रेषक :
श्री विजय कुमार गुप्ता, नई देहली